भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 8 | मई-जून 2007 | अंक 5-6

किताबों के साथ

मैं रहना चाहता हूँ
किताबों के साथ
हमेशा किताबों का होकर
गुज़रना चाहता हूँ पल-पल
उनके बीच से
फूलों के बीच से गुजरती है
जैसे हवा
गुज़रना चाहता हूँ
अपने बीच से
गुज़रती है अँधेरी-गुफा के बीच से
जैसे रोशनी की किरन
रखना चाहता हूँ
अपनी आँखों में
शिशु की आँखों में रहती है
जैसे माँ
शामिल करना चाहता हूँ
अपने शरीर में
शामिल हैं जैसे—
पृथ्वी, जल, अग्नि, हवा, आकाश
समा जाना चाहता हूँ उनके
विस्तार में
समाई है जैसे समुद्र में वर्षा की बूँद
मैं विलीन कर लेना चाहता हूँ
किताबों में अपना वजूद
मैं चाहता हूँ—
कोई रहे न रहे, किताबें रहें साथ
कोई बोले न बोले, किताबें करें बात

—जय चक्रवर्ती, रायबरेली

पढ़ने की कला को विकसित करने के लिए एक ऐसा मस्तिष्क विकसित करो जो जिज्ञासु हो, जिसमें जानने की अदम्य प्यास हो और तब तुम्हें अपने प्रश्नों का उत्तर पठनीय ग्रन्थों में स्वत: ही मिल जायगा। **—स्वामी विवेकानन्द**

शरीर के लिए व्यायाम जितना आवश्यक है, मस्तिष्क के लिए अध्ययन भी उतना ही जरूरी है

—रिचार्ड स्टील

कहाँ गये वे लोग, कहाँ गये वे शब्द

आज हम प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की 150वीं वर्षगाँठ मना रहे हैं, उस बलिदान को स्मरण कर रहे हैं, परन्तु प्रश्न है, कहाँ गये वे शब्द, कहाँ गये वे लोग, जिन्होंने अपने त्याग-बलिदान से उन शब्दों को अर्थ प्रदान किया था। आज शब्दों ने अर्थ खो दिए हैं, उन अर्थों में उनका प्रयोग नहीं होता जिन अर्थों के लिए वे ज्ञात थे।

आज देश चारित्रिक संकट से गुजर रहा है। राजनीति का चेहरा बदल गया है। कवि दुष्यन्त की पंक्ति है—

इस सिरे से उस सिरे तक सब शरीके जुर्म हैं,
आदमी या तो जमानत पर रिहा है या फरार।

आज देश का चारित्रिक पतन हो गया है, जब तक न्यायालय उसे अन्तिम रूप से दोषी घोषित न कर दे, तब तक वह विधायक, सांसद, नेता सब कुछ बन सकता है, जेल को अपना चुनाव कार्यालय बना सकता है।

किसी समय कबूतर उड़ाये जाते थे, कबूतर उड़ाने की प्रतिद्वन्दिता होती थी, जिसे कबूतरबाजी कहते थे। लोग कबूतर पालते थे, कबूतर द्वारा पत्र-समाचार भेजे जाते थे। आज 'कबूतरबाजी' को हमारे माननीय सांसदों ने नया अर्थ प्रदान किया है। भारतीय नागरिकों को फर्जी पासपोर्ट पर अपनी पत्नी, बेटी, पुत्र, भाई आदि बनाकर विदेश भेजा जा रहा है। शायद दुष्यन्त कुमार को इसका आभास हो गया था। उन्होंने लिखा—

एक कबूतर चिट्ठी लेकर, पहली-पहली बार उड़ा,
मौसम एक गुलेल लिये था पट से नीचे आन गिरा।

आज देश नैतिक संकट से गुजर रहा है। ऐसे में साहित्य, संस्कृति, कला की बात करना बेमानी है। शब्द खोटे सिक्के बन गये हैं, वे अर्थहीन हो गये हैं। शब्दों को अर्थ व्यक्ति तथा समाज प्रदान करते हैं। कहाँ हैं आज वे लोग, वह समाज।

कहाँ गये—गाँधी, नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, लालबहादुर शास्त्री, मौलाना आजाद, कहाँ गये प्रसाद, प्रेमचंद, निराला, महादेवी, पंत? एक भारतीय आत्मा पं० माखनलाल चतुर्वेदी की पुष्प की अभिलाषा—

मुझे तोड़ लेना बनमाली, उस पथ में देना तुम फेंक।
मातृ-भूमि पर शीश चढ़ाने, जिस पथ जावें वीर अनेक।

क्या इसी मातृभूमि के वीरों के लिए लिखी गई थी? यह देशभक्ति की धरोहर है जिसे पाठ्य-पुस्तकों में औपचारिकता के रूप में दुहरा लेते हैं।

कैसी विडम्बना है, शंकर, राम, कृष्ण भी आज आतंकवाद से त्रस्त सुरक्षा के घेरे में हैं। आज व्यक्ति, व्यक्ति न होकर जाति है, धर्म है, दलित है, अगड़ा है, पिछड़ा है महज एक वोट है—जो सत्ता प्रदान करता है।

क्या कभी हम मनुष्य की संज्ञा प्राप्त कर सकेंगे? आज देश के उच्च तथा सर्वोच्च न्यायालय देश की व्यथा को अनुभव कर रहे हैं, देखना है संसद के आक्रोश से संघर्ष कर कब तक वे आम-नागरिक के अधिकारों की रक्षा कर पाते हैं?

—पुरुषोत्तमदास मोदी

हिन्दी कहानी के हिरामन काशीनाथ

—महाश्वेता देवी

मैंने चार वर्ष पहले, 2003 में कोलकाता के नजरुल मंच में 'काशीनामा' का मंचन देखा था। उषा गांगुली निर्देशित उस नाटक में बनारस है, लेकिन सिर्फ काशी दर्शन नहीं है, भारत दर्शन है, बल्कि विश्व दर्शन है। उसमें विश्व के समूचे सांप्रतिक परिदृश्य का निचोड़ है, कट्टरता-बाजारवाद से लेकर वैश्वीकरण-उदारीकरण की चुनौती का सार है। यह नाटक हिन्दी कथाकार काशीनाथ सिंह की कहानी 'पांडे कौन कुमति तोहे लागी' पर आधारित है। नाटक देखने के बाद मैंने कहानी पढ़ी थी। कहानी कहूँ या उपन्यास अंश? यह कहानी 'काशी का अस्सी' उपन्यास में संकलित है। इस उपन्यास में पाँच कथाएँ हैं। एक दूसरे से गुंथी हुई और अपना अलग अस्तित्व रखती हुई भी। उन्हें स्वतंत्र रूप से भी पढ़ा जा सकता है और मिलाकर भी। सबको मिलाने पर वह एक मुकम्मिल औपन्यासिक रचना बनती है। मैं 'काशीनामा' और 'काशी का अस्सी' दोनों से बेहद प्रभावित हुई। जितना कथ्य के कारण, उतना ही शिल्प के कारण। 'काशीनामा' से बंगाल का संस्कृतिसचेत समाज भी प्रभावित हुआ। बांग्ला पत्र-पत्रिकाओं में 'काशीनामा' छाया और काशीनाथ सिंह भी।

'काशी का अस्सी' का अनुवाद भी बांग्ला में हो चुका है। श्रीमती रेणुका बनर्जी ने बड़ी ही निष्ठापूर्वक इसका अनुवाद किया है। भारतीय भाषाओं में ऐसे कथाकार कम हैं, जिनके उपन्यास का लोकेल उस नगर का प्रतीक अथवा पहचान बन गया हो। बनारस में रह रहे मेरे अत्यन्त ही स्नेहभाजन कवि-कथाकार अरविन्द चतुर्वेदी ने मुझे बताया कि हिन्दी में 'काशी का अस्सी' के प्रकाशन के बाद काशी का अस्सी मुहल्ला बनारस के सांस्कृतिक, राजनीतिक, धार्मिक गतिविधियों के केन्द्र व प्रतीक के रूप में जाना जाता है। काशीनाथ सिंह का एक और उपन्यास है—'अपना मोर्चा'।

यह उपन्यास 70 के दशक के बाद के छात्र आन्दोलन पर लिखा गया है। इसलिए भी मेरे लिए यह बेशकीमती है। यह उपन्यास वामपंथी छात्र संगठनों की स्टडी सर्किल में पढ़ा जाता है।

काशी ने गद्य की कई विधाओं को साधिकार संस्पर्श किया है और समृद्ध भी किया है। दृष्टांत के लिए उनके संस्मरण की किताबों—'याद हो कि न याद हो', 'घर का जोगी जोगड़ा' और 'आछे दिन पाछे गए' को ले सकते हैं। मेरी राय में किसी भाषा में संस्मरण लिखने के लिए ये संस्मरण मानक बनने की सामर्थ्य रखते हैं। किसी विधा को जीवंत इसी तरह संस्मरणों में कहानी की गम्भीरता देकर ही बनाया जा सकता है। मुझे नहीं पता कि काशी के संस्मरणों के छपने के पहले हिन्दी में इस विधा की क्या स्थिति थी और छपने के बाद क्या स्थिति हुई? काशीनाथ कथाशिल्पी हैं। उनके शिल्प के स्तर पर भी विविधता है। जिस जातीय गद्य की बात की जाती है, उसे देखने के लिए काशी का गद्य देखना चाहिए। काशीनाथ सिंह ने अनेक कहानियाँ भी लिखीं जिनमें कुछ बांगला में भी अनूदित होकर छपी हैं, जैसे 'सुधीर घोषाल', 'सूचना', 'सुख' और 'सदी का सबसे बड़ा आदमी'। काशीनाथ ने कहानी लेखन में जातकों की शैली का इस्तेमाल किया है। उन्होंने लोककथा की शैली का भी प्रयोग किया है। इससे उनकी कहानी में विविधता है। उनकी कहानियों के ज्यादातर पात्र बुनियादी तौर पर ग्राम से निकले हुए वे पात्र हैं, जो शहर आए हैं और अपने अस्तित्व के लिए संग्राम कर रहे हैं। वे पात्र ग्रामीण जमीन पर खड़े हैं। उनके भीतर शहरी धूर्तता और बेईमानी नहीं आ पाई है। स्वयं काशीनाथ के व्यक्तित्व की एक खूबी मुझे बहुत भाती है, वह है, उनका ठेठ ग्रामीण व्यक्तित्व। वे जमीन के आदमी हैं और आदमी से ही जिन्दगी को समझते हैं। काशी में पेंच नहीं है। उनसे मेरी दो मुलाकातें हैं। दोनों कोलकाता में। पहली बार कोलकाता पुस्तक मेले में। शहर में रहते हुए ग्रामीण संवेदना, भोलापन और सच्चाई बचाकर रख पाना और शहरी विकृतियों से अपने को बचाए रखना बड़ी बात है। काशीनाथ पक्षी की तरह हैं, वृक्ष की तरह हैं, जिसे प्रकृति ने गढ़ा, ग्राम्य परिवेश ने गढ़ा। काशी में कृत्रिमता नहीं है। वे सीधे-साधे हैं 'तीसरी कसम' के 'हिरामन' की तरह। काशीनाथ को देख मुझे विभूतिभूषण बंद्योपाध्याय याद आते हैं। उनकी रचनाओं में आम भारतीय और उसका संग्राम है। काशी की रचनाओं में भी यह भारतीयत्व है। हममें कितने लोग इस भारतीयत्व को अर्जित कर पाते हैं?

रेलमंत्री लालू यादव
इमरजेन्सी की पटरी पर दौड़ते हुए

लीला मजूमदार

—डॉ० श्रीप्रसाद

बंगला बाल साहित्य की प्रसिद्ध लेखिका **लीला मजूमदार** का निधन हो गया। उन्हें बड़ी लम्बी उम्र मिली। जीवन के पूरे सौ वर्ष जीकर उन्होंने एक सौ एकवें वर्ष में प्रवेश कर लिया था। बंगला का बाल-साहित्य बड़ा समृद्ध है, जिसमें लीला मजूमदार का भी बड़ा योगदान है। हास्य बाल कथा सृजन में भी वे विशिष्ट थीं। इनकी बालोपयोगी कृतियाँ हैं—दिन हुपुरे, पदीमीसीर, बर्मीबाक्स, लाल नील दियासलाई, भयजादेर पीछ नियेछे, माकू और छोटोदेर भालो गल्प आदि। अपनी लम्बी उम्र में इन्होंने बाल साहित्य की बड़ी सेवा की। बड़ों के लिए भी लिखा, पर बाल साहित्य से ही विशेष जुड़ाव रहा। विश्वविख्याति के फिल्मकार सत्यजित रे की आप बुआ थीं। बंगाल में बंगला बाल साहित्य के विकास में राय परिवार की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। सत्यजित रे के पिता सुकुमार राय बंगला में हास्य बाल साहित्य के पुरोधा हैं। उन्होंने गद्य और पद्य, दोनों विधाओं में हास्य बाल साहित्य का प्रभूत सृजन किया। उनकी हास्य बाल कविताएँ 'आबोल ताबोल' अत्यन्त प्रसिद्ध है। सत्यजित रे ने रोचक जासूसी किशोर कथाएँ लिखी हैं।

अंग्रेजी के हास्य बाल साहित्यकार एडवर्ड लीयर का उन्होंने बंगला में रूपान्तर भी किया है।

लीला मजूमदार का बहुत बड़ा योगदान सत्यजित रे के साथ बंगला बाल मासिक 'संदेश' के सम्पादक के रूप में भी है। दोनों ने 'संदेश' को बाल साहित्य के शिखर पर पहुँचाया। 'संदेश' के दीर्घ प्रकाशन काल में उत्कृष्टतम बंगला बाल साहित्य इस बाल मासिक में प्रकाशित हुआ है। लीला मजूमदार ने रवीन्द्रनाथ टैगोर के बाल साहित्य पर गम्भीर विवेचनात्मक लेख भी लिखा—'रवीन्द्रनाथ टैगोर एज़ ए राइटर फॉर चिल्ड्रेन'। पर यह सोचकर दु:ख होता है कि महान साहित्यकार लीला मजूमदार को राष्ट्रीय स्तर पर कौन-सा सम्मान मिला। यद्यपि उन्हें आनन्द पुरस्कार, देशिकोत्तम पुरस्कार और रवीन्द्र पुरस्कार मिला, पर पद्मभूषण या पद्म विभूषण जैसा सम्मान उन्हें नहीं दिया गया। इसकी कसौटी बड़ों का साहित्य या बड़ों का काम ही माना गया है। जिस साहित्यकार ने अपने साहित्य से करोड़ों बच्चों, शिशुओं और बालकों का मनोरंजन किया तथा मार्गदर्शन प्रदान किया, उसके लिए ये पुरस्कार उचित हैं। भारतीय भाषाओं के किसी बाल साहित्यकार ने ऐसी बात नहीं सोची है, पर ऐसा सोचा जाना अनुचित नहीं है। रूसी भाषा के बाल साहित्यकार से० मारशार्क तथा आग्नेयाबार्तो आदि को सर्वोच्च सम्मान लेनिन पुरस्कार दिया गया था। भारतीय भाषाओं के प्रतिष्ठित बाल साहित्यकारों को बड़े पुरस्कार देने की मानसिकता भी बननी चाहिए।

महादेवी वर्मा : वेदना एवं विद्रोह

यह मंदिर का दीप, इसे नीरव जलने दो

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में 5 तथा 6 मई 2007 को महिला अध्ययन एवं विकास केन्द्र, प्रेमचंद साहित्य संस्थान तथा भारत कला भवन के संयुक्त तत्त्वावधान में भारत कला भवन परिसर में 'महादेवी वर्मा : वेदना और विद्रोह' विषक दो द्विवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन हुआ। संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए **प्रो० नामवर सिंह** ने कहा—महादेवीजी का साहित्य भारतीय स्त्री के सुप्त स्वाभिमान को जागृत कर सकता है। उनके अभिमानी व्यक्तित्व के कारण ही उन्होंने अपने मधुर निजत्व को आजीवन अकेलेपन में रहना स्वीकार किया। महादेवीजी को वर्तमान में लोगों को बताने की जरूरत है कि वह कितनी मानवीय स्त्री थीं। वह काँटों के सेज और आँसुओं को हमेशा ताज समझती थीं। महादेवीजी ने अकेलेपन में रहने के बावजूद अपने पति के प्रति कभी अपशब्दों का प्रयोग नहीं किया। गीत रचना में महादेवीजी को जितनी सफलता मिली उतनी अन्य को नहीं। वह माघ के महीने में कल्पवासियों के साथ रहकर लोकगीतों को खूब सुनती थीं और उन्हें शब्दों में पिरोकर नया आकार भी देती थीं। महादेवीजी को स्त्री की वेदना एवं विद्रोह तक सीमित कर देना ठीक नहीं है। वह हमेशा ठहाके लगाकर हँसती थीं। उन्हें कभी किसी ने रोते नहीं देखा।

महादेवीजी के साहित्य में ममत्व की ऐसी निर्झरणी प्रवाहित होती है जो सम्पूर्ण समाज को स्नेह से अभिमंत्रित करने की इच्छा व्यक्त करती है। महादेवीजी को किसी की दया की अपेक्षा नहीं। अपनी जिन्दगी में अपने स्वाभिमान के चलते उन्होंने किसी से कुछ नहीं कहा। महादेवीजी अपनी सीमा समझती थीं, इसलिए उन्होंने अपनी सीमा में रहकर ही समाज में व्याप्त समस्याओं का निवारण करने की कोशिश की। यह विडम्बना ही है कि यह संगोष्ठी हिन्दी विभाग की ओर से नहीं बल्कि महिला अध्ययन एवं विकास केन्द्र की ओर से आयोजित किया जा रहा है।

संगोष्ठी में स्वागत भाषण तथा विषय की स्थापना महिला अध्ययन एवं विकास केन्द्र की समन्वयिका प्रो० चन्द्रकला पाड़िया ने किया। अध्यक्षता कुलपति प्रो० पंजाब सिंह ने की। संचालन प्रेमचंद साहित्य संस्थान के निदेशक प्रो० सदानंद शाही ने और धन्यवाद ज्ञापन भारत कला भवन के निदेशक डॉ० नवलकृष्ण ने किया।

संगोष्ठी के पूर्व डॉ० बच्चन सिंह ने भारत कला भवन की दीर्घा में महादेवी के चित्रों और काव्यों की प्रदर्शनी का उद्घाटन किया।

सन् 1970 में बनारस रोटरी क्लब ने अखिल भारतीय कवि सम्मेलन का आयोजन किया था, उस कवि सम्मेलन में महादेवीजी तथा पं० सुमित्रानंदन पंत आये थे, रायकृष्णदासजी के यहाँ ठहरे थे। वे भारत कला भवन देखने गये। लौटते समय हाल में नटराज की प्रतिमा के समक्ष लिया गया चित्र। बाएँ से पुरुषोत्तमदास मोदी, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत।

संगोष्ठी के दूसरे सत्र में महिला महाविद्यालय काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की **प्रो० चन्द्रकला त्रिपाठी** ने 'महादेवी वर्मा का काव्य : स्त्री वेदना' पर बोलते हुए कहा—महादेवीजी के काव्य में जिस पीड़ा की अभिव्यक्ति मिलती है, वह पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ी भारतीय स्त्री की पीड़ा है। उनकी 'शृंखला की कड़ियाँ' एक युगांतकारी कृति है। यह कृति तब तक भारतीय नारी मुक्ति आन्दोलन का आदर्श बनी रहेगी जब तक भारतीय नारी अधीनस्थता की बेड़ी में जकड़ी रहेगी।

हिन्दी विभाग के **प्रो० अवधेश प्रधान** ने कहा—महादेवीजी ने भारतीय सांस्कृतिक परम्परा की सत्यता और उसके इस विस्तार में स्त्री की भूमिका की पहचान की थी। महादेवीजी का काव्य नारी मुक्ति के प्रति जो व्यग्रता है, वह निवर्तमान बन्धनों को तोड़ने के लिए नहीं वरन् भविष्य के सृजन के लिए है। एनसीईआरटी की **डॉ० संध्या सिंह** ने कहा—महादेवीजी के काव्य को वर्तमान शिक्षण संस्थाओं द्वारा गलत ढंग से प्रस्तुत किया गया है। उसे पुन: विवेचित करने की जरूरत है। इस सत्र की अध्यक्षता **प्रो० केदारनाथ सिंह** ने की।

दो द्विवसीय गोष्ठी के अन्तिम दिन रविवार, 6 मई को **प्रो० नामवर सिंह** ने कहा—मीरा और महादेवी दोनों ने समाज की रूढ़िवादी परम्परा में विवाहित जीवन को स्वीकार नहीं किया था। छायावाद महान साहित्य युग का काल था। उस समय साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में समाज में व्याप्त समस्याओं को प्रस्तुत किया, लेकिन वर्तमान युग के साहित्य में रचनाकार अपने धरातलीय जड़ से हटकर रचना कर रहे हैं। भक्ति आन्दोलन काल से बनारस और इलाहाबाद दो बड़े केन्द्र थे। एक ओर जयशंकर प्रसाद, निराला और रामचन्द्र शुक्ल तो दूसरी ओर महादेवी और पंत। महादेवीजी एक महान साहित्यकार थीं। वह जयशंकर प्रसाद और सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' से जरूर पीछे थीं, लेकिन सुमित्रानंदन पंत से आगे थीं। महादेवीजी का विचार क्रान्तिकारी था।

विशिष्ट अतिथि **प्रो० केदारनाथ सिंह** ने महादेवी के संस्मरणों का उल्लेख करते हुए कहा—वे वेदों का अध्ययन करना चाहती थीं, इसी कारण वे काशी हिन्दू विश्वविद्यालय आयीं किन्तु अब्राह्मण होने के कारण उन्हें वेद अध्ययन की अनुमति नहीं दी गई। इससे आभास लगता है कि किन रूढ़ियों के बीच महादेवी ने संघर्ष किया। उन्होंने प्रयाग विश्वविद्यालय से वेदों का उच्च अध्ययन किया। स्वयं निराला ने युग प्रवर्तिका महादेवी के प्रति कविता लिखी जिसमें उस दौर में जो व्यंग्य और उपहास महादेवी ने झेला उसका संकेत है—दिये व्यंग्य उत्तर, रचनाओं से रचकर, विदुषी रही विदूषकों के समक्ष तुम तत्पर—उनके संघर्षमय जीवन को निराला का उपहार है।

संगोष्ठी में प्रो० राजेन्द्रकुमार, डॉ० अवधेश प्रधान, प्रो० चौथीराम यादव, डॉ० सुमन जैन, डॉ० अनुराधा बनर्जी, डॉ० विनोदकुमार तिवारी, डॉ०

मनोजकुमार सिंह आदि ने भाग लिया। इस अवसर पर महादेवीजी के सुरों को शास्त्रीय संगीत की साहित्यिक महफिल में प्रस्तुत कर डॉ० रेवती साकलकर, डॉ० सी० बालाजी एवं डॉ० गणेशन के स्वरों ने श्रोताओं को मुग्ध कर दिया। संगोष्ठी स्थल भारत कला भवन का सभागार व गलियारा महादेवी वर्मा की रचनाओं के आधार पर बनाए गए चित्रों से मुखरित हो रहा था। कलाकार धीरेन्द्र मोहन ने महादेवीजी की कविताओं व गद्य रचनाओं पर आधारित 20 कलाकृतियों की प्रदर्शनी लगायी थी।

वाणी शूर

नामवरजी वाणी शूर हैं, वे जहाँ भी भाषण देने जाते हैं कोई विवादी शिगूफा छेड़ने से नहीं चूकते जिससे नामवरजी काफी समय तक चर्चित रहते हैं।

महादेवी वर्मा पर आयोजित संगोष्ठी में नामवरजी ने कह दिया—सुमित्रानंदन पंत की कृतियों में एक चौथाई **कूड़ा** है। काशी के साहित्यकारों के बीच इसकी भीषण प्रतिक्रिया हुई।

बीएचयू हिन्दी विभाग के अध्यक्ष **प्रो० कुमार पंकज** ने कहा कि प्रो० नामवर का यह कहना कि महादेवी व्यक्तिगत जीवन में बहुत हँसती थीं। इस कारण उनके काव्यों को करुणा और वेदना की दृष्टि से नहीं देखना चाहिए, बड़ा भ्रामक है। व्यक्तिगत जीवन को किसी भी साहित्यकार की कृतियों से एक सीमा के बाद जोड़ा नहीं जा सकता। लगता है नामवर 'क्यूं इतना तुम मुस्कुरा रहे हो, क्या गम है जिसको छुपा रहे हो' नहीं पढ़ी है। पंत पर की गयी टिप्पणी हास्यास्पद है, जब नामवरजी ने अपनी पुस्तक 'छायावाद' लिखी तब इस धारणा को क्यों अभिव्यक्त नहीं किया। नामवरजी की अदा है किसी भी मंच और स्थान को देखकर वक्तव्य बदल देना। हिन्दी विभाग के **प्रो० बलराज पाण्डेय** बोले पंत की अधिकांश रचनाएँ कूड़ा हैं, इस टिप्पणी से असहमत हूँ। इस शब्द के साथ प्रहार उचित नहीं है। फिर बोले, नामवर ने निराला, जयशंकर प्रसाद, महादेवी वर्मा और फिर पंत की रैकिंग उचित की है। रामचन्द्र शुक्ल द्वारा जो छायावादी कवियों की स्थिति का निर्धारण किया गया था वह अनुचित रहा। इसके बाद इनका निर्धारण रामविलास शर्मा ने किया और निराला को सर्वश्रेष्ठ घोषित किया। लेकिन, महादेवी को जो स्थान मिलना चाहिए था, नहीं दिला पाये। सांस्कृतिक व शिक्षा की राजधानी में नामवरजी ने महादेवी को उचित स्थान दिया है।

प्रमुख समीक्षक **प्रो० चन्द्रबली सिंह** ने कहा जिस शब्द का इस्तेमाल नामवरजी ने किया, वह आलोचना की भाषा नहीं हो सकती। बोले, एक चर्चित अमेरिकी कवि वाल पिटमैन की अपने ऊपर एक कविता है, जिसमें वह कहते हैं कि समय-समय पर मैं स्वयं खण्डन करता हूँ, नामवर भी अपने को वैसा ही समझते हैं लेकिन वह भूल जाते हैं कि वह पिटमैन जैसे महान नहीं हैं। यह दंभ मात्र है। उन्होंने कहा कि मैं जानता हूँ कि जब पंत अरविंद दर्शन से प्रभावित हुए तो उनकी लेखनी कमजोर हुई लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि उनका लिखा कूड़ा हो गया। छायावाद की वृहत त्रयी में निराला, प्रसाद और पंत ही हैं, इसमें महादेवी का स्थान पंत से पहले उचित नहीं है। बीएचयू हिन्दी विभाग के **प्रो० अवधेश प्रधान** कहते हैं, पंतजी छायावाद के अग्रधावकों में रहे हैं। स्वयं नामवरजी ने अपनी पुस्तक 'छायावाद' में पंतजी का उत्कृष्ट मूल्यांकन किया है। पंत की लेखनी बहूमूल्य है। उन्होंने ही सबसे पहले प्रगतिवादी युग के आने की सूचना अपनी लेखनी से दी। पंत का काव्य महादेवी से श्रेष्ठतर है। हाँ, महादेवी का गद्य अवश्य पंत से बेहतर और अच्छा है। इनके गद्य की तुलना निराला के रेखाचित्रों से हो सकती है। नामवर की टिप्पणी पर बोले बड़े आलोचक के मुँह से इतने बड़े कवि के लिए ऐसे शब्द का इस्तेमाल शोभा नहीं देता।

प्रेमचंद साहित्य संस्थान के संयोजक **डॉ० सदानंद शाही** का कहना है, पंत से ज्यादा बेहतर महादेवी इसलिए हैं कि पंतजी को अपनी सीमा का ज्ञान अन्त तक नहीं हुआ जबकि महादेवी वर्मा को इसका भान था। छायावाद की वृहत त्रयी को बदलने का नामवर का प्रयास सराहनीय है, महज एक स्त्री होने के नाते सम्भवत: महादेवी को इस तिकड़ी से दूर रखा गया। वास्तविकता यह है कि निराला और प्रसाद के बाद महादेवी ही इसके दायरे के योग्य हैं।

साहित्यकार **डॉ० वाचस्पति** का कहना है नामवरजी को मौखिक के बजाय अपनी बातें लिखित रूप से कहनी चाहिए। जहाँ तक पंत बड़े या महादेवी का मुद्दा उछला है, यह अनुचित है। यदि ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश हैं तो इनके बीच गणेश का भी तो स्थान है।

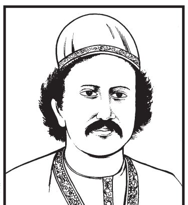

''भाई हिन्दुओं! तुम भी मत-मतान्तर का आग्रह छोड़ो। आपस में प्रेम बढ़ाओ। इस महामंत्र का जाप करो। जो हिन्दुस्तान में रहे, चाहे किसी रंग जाति का क्यों न हो, वह हिन्दु-हिन्दु की सहायता करो। बंगाली, मरट्ठा, पंजाबी, मद्रासी, वैदिक, जैन, ब्राह्मो, मुसलमान सब एक का हाथ एक पकड़ो। कारीगरी जिसमें तुम्हारी यहाँ बढ़े, तुम्हारा रुपया तुम्हारे देश में रहे वह करो।''

नवम्बर 1984, बलिया

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

नामवरजी की वेदना और साहित्यकारों का विद्रोह

थाने में रपट

बकौल नामवरजी सुमित्रानंदन पंत के काव्य में कूड़ा है, और महादेवी जन्मशती के आयोजक सदानंद शाही ने और पीछे मुड़कर कह दिया—''तुलसीदास के यहाँ भी बहुत कूड़ा है।''

धुँधुआता कूड़ा धधक उठा।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के राजनीति शास्त्र विभाग के प्रो० कौशलकिशोर मिश्र और भाजपा के पदाधिकारी अशोक पाण्डेय तथा अन्य को यह कहाँ बर्दाश्त होता। लंका थाने में रपट दाखिल की—मानवतावादी, राष्ट्रवादी एवं गाँधीवादी कवि सुमित्रानंदन पंत के साहित्य को डॉ० नामवर सिंह द्वारा कूड़ा कहना समूचे देश का अपमान है। यह राष्ट्रीय अपराध है। अत: भारतीय दण्ड संहिता के अनुसार दण्डात्मक कारवाई करनी चाहिए। ऐसी ही रपट तुलसी साहित्य प्रचार समिति की ओर से प्रेमचंद साहित्य संस्थान के डॉ० सदानन्द शाही के विरुद्ध तुलसीदास पर दिए गये बयान के सन्दर्भ में दाखिल की गई है।

अन्य प्रतिक्रियाएँ

प्रो० बच्चन सिंह : पंत की कृतियों के प्रति नामवर के विचार जो भी हों लेकिन 'कूड़ा' शब्द का इस्तेमाल घोर आपत्तिजनक है, असंसदीय और असाहित्यिक है। जहाँ तक छायावादी वृहत त्रयी की बात है तो सबसे पहले इस शब्द का इस्तेमाल नंददुलारे वाजपेयी ने किया था। तब प्रसाद, निराला और पंत थे। इस पर निराला ने स्वयं कभी हँसते हुए कहा था कि अब तो वृहत त्रयी में महादेवी वर्मा को भी जोड़ दिया गया है, चार पैर हो गये तथा रामकुमार वर्मा को पूँछ के रूप में जोड़ दिया गया है हो गया चौपाया।

ज्ञानेन्द्रपति : पंत का परवर्ती लेखन प्रेरणाहीन है। काव्याभ्यास का परिचायक है बावजूद इसके 'पल्लव' से 'ग्राम्या' तक की काव्ययात्रा पंत को वृहत त्रयी में रखने के लिए पर्याप्त है। नामवर के चाहने से क्या होगा। पंत का काव्य वैभव है, प्रकृति के प्रति राग है, अभिव्यक्ति चारुता है, वह अद्वितीय है। अवसरानुकूल व्याख्या है, आलोचकीय अवसरवादी विचार है।

डॉ० पी०एन० सिंह : नामवर के मुँह से निकला 'कूड़ा' शब्द मंचित अभिव्यक्ति है इसे गम्भीरता से नहीं लेना चाहिए। महादेवीजी में जो अनुभूतिगत गहराई है, सघनता है, प्रामाणिकता हे वह पंत में नहीं है। बावजूद इसके वृहत त्रयी के स्थान पर चतुष्टयी भी हो सकता है।

इनके अतिरिक्त काशी के अनेक साहित्यकारों ने अपनी प्रतिक्रिया में 'कूड़ा' पर विरोध प्रगट किया है।

अब कोई शान्तिप्रिय नहीं दीखता

—डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र

जन्मशताब्दी वर्ष के बहाने पं० शान्तिप्रिय द्विवेदी का उनकी मृत्यु के लगभग 40 वर्ष बाद स्मरण करना सचमुच सुखद एवं रोमांचक है। उनका स्मरण उस आर्ष-परम्परा का स्मरण है जिसका जीवन लोकसंग्रह के लिए समर्पित होता है। यावज्जीवन लोक के स्वास्थ्य के लिए सद्भावना एवं शुभकामना का दान करते हुए कभी किसी प्रतिदान की अपेक्षा न रखना कोई मामूली बात नहीं है। द्विवेदीजी इस परम्परा के अन्तिम मनीषी हैं।

द्विवेदीजी को यह परम्परा पैतृक विरासत के रूप में प्राप्त हुई थी। उनके पिताश्री का परिचय आचार्य केशवप्रसाद मिश्र के शब्दों में इस प्रकार है—''प्रवृत्ति से ब्रह्मनिष्ठ एवं स्वभाव से निस्पृह 'दुर्बली महाराज' इसकी प्रतीक्षा न करते कि कोई उनका आवाहन करे तो वे उपस्थित हों। उनका मन जिधर उन्मुख होता शरीर भी उधर ही जाता। किसी के यहाँ पहुँचने पर अभ्युत्थान या अभिवादन के प्रति निर्मम वे धरती या ध्वलासन जहाँ चाहते वहीं यथेष्ट विराज जाते। अपरोक्ष अनुभूति के कुछ रहस्यमय सूत्र कहते और बिना अनुज्ञा लिये ही चल देते। उनकी इस दोटप्पी प्रक्रिया से बुध तो अवश्य लाभ उठाते पर अबुध पागलपन ही समझते। त्रिसंध्य अदैन्य का प्रार्थी मेरा सुपरिचित और श्रद्धास्पद यह ब्राह्मण दूर्वादल खाकर रह जाता, पर किसी के सामने दीन बनकर याचना न करता।'' (पथचिह्न की भूमिका)

ये दुर्बली महाराज आजमगढ़ जिले के गोसाईं बाजार डाकखाना के अन्तर्गत बरँहपुर गाँव के रहने वाले थे जहाँ खेती-बारी तो खास नहीं थी किन्तु ब्राह्मण-वृत्ति के द्वारा मर्यादित रूप में जीवन-निर्वाह की दृष्टि से कोई कमी न थी। अदम्य ज्ञान-पिपासा इन्हें काशी खींच लायी। बकौल द्विवेदीजी—''पिताजी कब काशी आये, किस तरह उन्होंने अपने जीवन का प्रारम्भ किया, कैसे-कैसे क्या पढ़ा-गुना, यह सब अज्ञात है। हाँ यहाँ उन्होंने अपना परिवार रोप लिया था। एक पौधे की तरह आँखें खोलते ही मैंने देखा—माँ है, बहिन है, दुधमुँहा भाई है; किन्तु पिताजी कहाँ हैं? मेरी तुतलाहट टूटते-न-टूटे वे तो अनिकेतन संन्यासी हो चुके थे।'' (परिव्राजक की प्रजा, पृ० 3)

साल-दो साल में दुधमुँहा भाई भाई रुच्चन ईश्वर को प्यारा हो गया और कुछ ही अन्तराल पर माँ की छत्रछाया उठ गई। अब एकमात्र बाल विधवा तपस्विनी बहन की ममता का आश्रय बचा किन्तु किशोरावस्था तक पहुँचते-पहुँचते वह भी क्रूर नियति के हाथों छीन लिया गया। इस आपा-धापी में गाँव-शहर और रिश्तेदारी-नातेदारी आश्रय की तलाश करते दुर्बली महाराज के अति दुर्बल, लघुकाय एवं श्रवणशक्ति से कमजोर सुपुत्र मुच्छनजी किसी तरह प्राथमिक शिक्षा पूरी करके वाराणसी के कबीरचौरा मिडिल स्कूल तक पहुँच पाये थे कि असहयोग आन्दोलन का दौर चला और उन्होंने स्कूली शिक्षा का हमेशा के लिए त्याग करके देश और समाज के लिए कुछ करने का ठान लिया। यद्यपि स्कूली शिक्षा में वे सर्वोत्तम छात्रों की श्रेणी में स्थान रखते थे और छात्रवृत्ति के अधिकारी घोषित किए गए थे किन्तु वे किसी 'लीक' पर चलने वाले थे ही नहीं। असहयोग केवल सामयिक उत्प्रेरण बना। पढ़ाई छोड़ने का कारण वे स्वयं बतलाते हैं—''अचानक एक दिन सबकी आशाओं पर तुषारपात हो गया, जब मैंने पढ़ना छोड़ दिया। छोड़ने का कारण मेरा प्रतनु तन, स्वल्प श्रवण, स्वप्निल मन है।''

इस स्वप्निल मन ने उन्हें पिता की ही तरह 'मधुकरी वृत्ति' पर निर्भर बना दिया। कम्पोजिटरी, प्रूफरीडिंग, अनुवाद और यहाँ तक कि ईंट ढोकर जीविकोपार्जन के भी प्रयत्न उन्होंने समय-समय पर किये किन्तु शरीर और मन दोनों असहयोग करते रहे। अन्न क्षेत्रों में प्रायः एक जून भोजन पाकर अपनी ज्ञान-पिपासा शान्त करने के लिए उन्होंने वाचनालय जाना शुरू किया जहाँ पहले ही दिन अनपढ़ देहाती समझकर द्वारपाल ने उन्हें बाहर खदेड़ना चाहा तो मन का आक्रोश उसी वर्ष से प्रारम्भ समाचारपत्र 'आज' के माध्यम से एक पत्र द्वारा अभिव्यक्त हुआ। बचकाना लगने वाले नाम 'मुच्छन' को साहित्यिक रूप देने के लिए उन्होंने पत्रलेखक का नाम 'विद्यार्थी मुच्छन द्विवेदी' लिखा। 1920 में प्रकाशित इस पत्र से उनका लेखकीय जीवन प्रारम्भ हुआ। आगे चलकर पं० रामनारायण मिश्र ने उनके गुण-धर्म-स्वभाव को देखते हुए उनका नया नामकरण किया—'शांतिप्रिय'।

स्वामी रामतीर्थ की जीवनी से प्रेरित होकर रचनाकर्म की ओर अग्रसर होने वाले शांतिप्रियजी ने भवसागर को किस तरह भावसागर के रूप में परिणत कर लिया, यह अपने आप में एक गम्भीर शोध का विषय हो सकता है। अतिधन की ही तरह अति अध्ययन को भी उन्होंने अनपेक्षित माना है यही कारण है कि उन्होंने जो कुछ लिखा उसमें उनकी मौलिकता का एक नैसर्गिक आकर्षण है जो उनके जैसा कहीं दिखलाई नहीं पड़ता। संयोग की बात है जिस समय अन्तस्तल में अनन्त जिज्ञासाएँ लिए उनका सहज प्राकृत, निसर्ग सुन्दर, भोलामन सारस्वत साधना की ओर अग्रसर हो रहा था उसी समय 1924 के आस-पास से 'छायावाद' के रूप में एक नया साहित्य-दर्शन अभ्युदित हो रहा था। द्विवेदीजी बतलाते हैं—''छायावाद में मुझे अपने जीवन की समष्टि मिली। उसमें प्रकृति-प्रदत्त

जीवनप्रिय पं० शान्तिप्रिय द्विवेदी एक त्रासद सन्नाटे में जीने को अभिशप्त थे। निपट अकेले। न अपना घर, न अपनी गृहस्थी। उनका अंतरंग मित्र कौन था, पता नहीं। उनके यहाँ कभी किसी को आते-जाते नहीं देखता था। शाम को वे अकेले कभी गोदौलिया, कभी अस्सी चौमुहानी पर टहलते दिखाई पड़ते थे। धोबी, रिक्शेवाले और दूधवाले से लड़ते-झगड़ते अकसर उन्हें देखा था और ज्येष्ठ विधा-साधक के पक्ष में कई बार मुझे खड़ा होना पड़ा था।

कई बार अपने अनुकूल मेरा आचरण न देखकर उन्होंने मुझे विक्षोभक मुद्रा में डाँटा भी था। एक दिन गोदौलिया की भीड़-भरी पटरी पर पीछे से उन्होंने मुझे आवाज दी। मुड़कर मैंने प्रणाम किया तो बोले कि ''युग का विपर्यय यह है कि ब्राह्मण ठाकुर के पीछे-पीछे घूम रहा है।'' अपनी सामान्यचर्या के मुताबिक मैं शिवप्रसाद सिंह के साथ शाम को घूमने निकला था। भीड़ में वे आगे थे, मैं पीछे। मैंने नम्रतापूर्वक निवेदन किया—''ये ब्राह्मण हैं, पण्डितजी।'' ''नहीं, मैं जानता हूँ, ये ठाकुर हैं, शिवप्रसाद सिंह हैं।'' और चमककर वे दूसरी ओर मुड़ गये।

एक बार उन्होंने अपनी अंतरंग पीड़ा प्रकट की थी—''होटल और वेश्यालय मनुष्य को परितृप्ति नहीं देता, गृहस्थी के आस्वाद से ही मनुष्य तुष्ट होता है। मुझे वही मयस्सर नहीं हुआ।'' और एक दिन बड़ी आत्मीयता से परम अरोचकी पं० शान्तिप्रिय द्विवेदी ने मेरे घर शरबत पीते मुझसे कहा था—''कलकत्ता से आपका रिश्ता है। लम्बी छुट्टी में जब जाइए, बंगीय रुचिवाली कोई लड़की देखिए!'' पचासा पार करने के बाद भी वे अपने लिए लड़की तलाश रहे थे, जो मेरे लिए चौंकानेवाली बात थी।

पं शान्तिप्रियजी अपनी पीढ़ी के नामी समीक्षक थे। उनकी कीर्ति छायावादी काव्य, मुख्यतः पन्तजी की कविता, के सहृदय समीक्षक के रूप में थी। विशारद की परीक्षा देने की जब तैयारी कर रहा था, उनकी 'संचारिणी' पढ़ी थी, और उनकी व्यंजक उद्भावनाओं का मेरे मन पर असर था। उन्हें अपेक्षित सम्मान देना तो मेरे लिए सहज था, पर उनका जटिल अपेक्षा पूरी करना बड़ा विकट था। पचासा पार करने के बाद भी वे अपनी गृहस्थी बसाने के लिए व्याकुल थे।

—कृष्णबिहारी मिश्र

सौन्दर्यानुराग भी मिला और अपना निस्संग जीवन, बहिन का सूनापन, माँ का अंत:करण, पिता का तपश्चरण, स्वामी राम का आत्मोद्‌बोधन, यह सब कुछ भी मिल गया।... जब मैंने छायावाद के सम्बन्ध में अपना अध्ययन किया तब उसमें मेरे जीवन का साकल्य था।'' (पथचिह्न, पृ० 63)

1924 से 1934 के बीच अपनी छायावादी धरातल की दो काव्य कृतियों 'नीरव' तथा 'हिमानी' के साथ-साथ अनेकानेक मौलिक निबन्धों तथा समीक्षाओं के द्वारा द्विवेदी ने अपनी अकिंचनता के बावजूद हिन्दी समाज में अपना एक स्थान बना लिया। जीवन यात्रा (1928), हमारे साहित्य-निर्माता (1934), कवि और काव्य (1936), साहित्यिकी (1938), संचारिणी (1939), युग और साहित्य (1941), सामयिकी (1944), धरातल (1948), ज्योतिविहग (1951), प्रतिष्ठान (1953), साकल्य (1955), पद्मनाभिका (1956), आधान (1957), वृन्त और विकास (1959), समवेत (1960) आदि पुस्तकों के साथ ही उनकी अद्‌भुत आत्मकथात्मक पुस्तकों 'पथचिह्न' (1946) तथा परिव्राजक की प्रजा (1952) उनके रचनाकर्म के विविध आयामों के साथ ही उनका विकट रचनात्मक संघर्ष भी स्पष्ट है। जिन जीवन-दशाओं में कोई भी टूटकर बिखर जा सकता है उनमें लगातार रचनाशील रहकर अपनी भाव-सम्पदा का विकास एवं विस्तार करते जाना एक स्पृहणीय आदर्श है। उनकी औपन्यासिक कृतियाँ 'दिगम्बर' (1954) तथा 'चारिका' (1958) बहुचर्चित नहीं हुईं किन्तु उनमें भी उनके जीवन के सूत्र ढूँढ़े जा सकते हैं। 1966 में प्रकाशित उनकी अन्तिम कृति 'स्मृतियाँ एवं कृतियाँ' आधुनिक जीवन की समस्याओं के सन्दर्भ में महत्त्वपूर्ण हैं।

जन्मशती वर्ष में हम अपने इस महान तथा सही अर्थों में सर्वहारा साहित्यकार की रचनाओं को सर्वसुलभ बनाने तथा देश, समाज और साहित्य के सन्दर्भ में उनके मौलिक विचारों से प्रेरणा लेने की स्थिति में होंगे यह विश्वास अनुचित नहीं होगा।

आजादी के पूर्व और
आजादी के बाद की पत्रकारिता

पत्र निकालकर सफलतापूर्वक चलाना बड़े-बड़े धनिकों और सुसंगठित कम्पनियों के लिए ही सम्भव होगा। पत्र सर्वांग सुन्दर होंगे। आकार बड़े होंगे। अच्छी छपाई होगी। मनोहर, मनोरंजक और ज्ञानवर्धक चित्रों से सुसज्जित होंगे। लेखों में विविधता होगी, गम्भीर गवेषणा की झलक होगी और मनोहारिणी शक्ति होगी। ग्राहकों की संख्या लाखों में गिनी जाएगी। सब कुछ होगा पर पत्र 'प्राणहीन' होंगे।

—बाबूराव विष्णु पराड़कर

आधुनिक हिन्दी : भारतेन्दु पूर्व

—श्री रामकृष्ण
रत्नाकर भवन, शिवाला, वाराणसी

आधुनिक हिन्दी का क्रमबद्ध विकास सोलहवीं शताब्दी के मध्य से आरम्भ हो चुका था। अनेक विधाओं में साहित्य एवं भाषा के प्रणयन तथा परिमार्जन में हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, स्वदेशी और विदेशी प्रतिभाशालियों ने अपने-अपने ढंग से योगदान किया। उस समवेत प्रयत्न के फलस्वरूप हिन्दी के रीतिबद्ध विकास का जो क्रम चल पड़ा वह आज भी अक्षुण्ण है।

उस युग में हिन्दी कविता की उन्नति सर्वविदित है। आज समय बहुत बदल जाने पर भी मध्ययुगीन कवियों की रचनाएँ जनमानस में जीवंत हैं तथा उनकी प्रेरणा अथवा लोक-रंजन की शक्ति भी फीकी नहीं पड़ी है। मध्ययुग की तीन सौ वर्ष व्यापी सुदीर्घ अवधि में एक से एक अनेक रससिद्ध कवि हो गये जिनकी प्रतिभा की समता का कोई बीसवीं शती में हुआ ही नहीं।

व्याकरण, मुहावरे, गठन, वाक्य-विन्यास, प्रयोग आदि पर फारसी के प्रभाव के कारण तथा पठान सुल्तानों एवं मुगल बादशाहों के दरबार में सैकड़ों वर्षों तक निरन्तर दैनन्दिन बोलचाल में रवां होने के कारण भाषा को जो नया सौष्ठव, चुस्ती और रवानी मिली, जिसके कारण वह नागरजनों एवं अभिजात वर्ग की शिष्ट भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई, उसने उस समय के प्रतिभाशाली लेखकों को गद्य लिखने के लिए भी प्रोत्साहित किया था तथा विभिन्न विषयों पर हिन्दी गद्य में पर्याप्त पुस्तकें लिखी गयीं।

गद्य साहित्य के मौखिक तथा लिखित दो रूप प्रचलित थे। मौलिक गद्य में किस्से, कहानियाँ जिनके वर्ण्य विषय मनुष्य चरित्र के बहुरंगे पहलू, इतिहास की घटनाएँ, लोक-जीवन में घटी कोई हृदयग्राही घटना, किसी क्रूर की क्रूरता अथवा किसी वीर, उदार, न्यायी की वीरता, उदारता, न्याय का प्रसंग, युद्धों का वर्णन, प्रतीकों द्वारा उपदेश, शिक्षा आदि होते थे। कहानियाँ सुनाने वाले पेशेवर दास्तान-गो, किस्सा-गो हुआ करते थे। वे कहानी कहने की कला में दक्ष होते थे तथा रईसों से लेकर जन-साधारण तक में उनकी पूछ थी। कहानी कहना भी एक कला थी और लोग उसका अभ्यास करते थे। बल्कि वह जीविका का साधन भी थी।

नाटकों का मौलिक रूप भाँड़ों की पेशागत विरासत थी। भाँड़ केवल प्रहसन अथवा भाण (सटायर) ही नहीं, बल्कि पौराणिक-कथा प्रसंगों पर आधारित गम्भीर नाटक भी अपने सीमित साधनों के भीतर प्रभावकारी ढंग से खेला करते थे। उनकी एक परम्परा बन गयी थी जो प्राचीन रूप में बीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक कायम थी।

उन्नीसवीं शताब्दी की अन्तिम चतुर्थाशी में काशी में मुहम्मद हुसेन एक अद्‌भुत कलाकार भाँड़ हो गया है। एकबार बुढ़वा मंगल के मेले में रेती पर वह 'हरिश्चन्द्र' नाटक खेल रहा था (वह भारतेन्दु रचित सत्य हरिश्चन्द्र नाटक नहीं था। बहुत दिनों से जनता के बीच प्रचलित एक दूसरा ही नाटक था) भीड़ जुटी थी। दो ढाई हजार मुसलमान दर्शक भी थे। इतना बढ़िया अभिनय हुआ कि राजा हरिश्चन्द्र पर विश्वमित्र का अत्याचार देखकर उन अपढ़ जाहिल विधर्मी मुसलमानों की सहज मानवीय भावना उत्तेजित हो उठी और वे 'मारो, मारो, उस फकीर को मारो' चिल्लाते हुए विश्वामित्र बने भांड़ को मारने के लिए दौड़े। बड़ी मुश्किल से भागकर बेचारे की जान बची। बार-बार खेलों में जब ऐसी ही उत्तेजना होने लगी तब अन्त में हारकर मुहम्मद हुसेन को 'हरिश्चन्द्र' नाटक का सार्वजनिक प्रदर्शन बन्द कर देना पड़ा। ऐसे प्रभावकारी ढंग से इतनी सफलतापूर्वक केवल सहृदयों, में ही नहीं बल्कि अत्यन्त साधारण जनसमुदाय की इतनी बड़ी संख्या को, जिसकी कोई सांस्कृतिक, धार्मिक, शैक्षणिक पृष्ठभूमि भी न हो, ऐसी अद्‌भुत रसानुभूति करा देना कोई साधारण कला का काम नहीं है।

आशय यह है कि हिन्दी नाट्य रचना और उनके मंचन की कला, भले ही वह आधुनिक शैली की न हो और वर्ग विशेष की सम्पत्ति रही हो, मध्ययुग से ही काफी उन्नति रही है।

अवध के रंगीले नवाब वाजिद अलीशाह कृष्ण-लीला पर आधारित रूपक बड़ी साज-सज्जा से खेला करते थे, यह लोक-विश्रुत है।

शाहआलम द्वितीय के बली अहमद जहांदारशाह जमाबख्त के वंशज सन् 1970 ई० से जब काशी के शिवाला स्थित राजा चेतसिंह के महल में आकर रहने लगे तो उन्होंने भी अपनी विशाल फुर्सत और सम्पत्ति संगीत, साहित्य, कला की आराधना में लगाया। उनके यहाँ प्राय: नाटक खेले जाते थे। उसमें दिल्ली लखनऊ, हैदराबाद आदि अन्य नगरों के कलाकारों का अभिनय भी होता था। बाज-बाज शौकीन शाहजादे स्वयं भी पार्ट करते थे। मगर यह जनता के लिए नहीं था, उसमें शाहजादों के आमंत्रित अतिथि ही दर्शक होते थे।

हाँ, उन नाटकों की भाषा के सम्बन्ध में कुछ मतभेद हो सकता है। फारसी की ओर कुछ

अधिक झुकी हुई थी, फिर भी उर्दू-ए-मुअल्ला नहीं थी। आम-फहम ही थी। बीच-बीच में आने वाले संगीत में फारसी की गज़लों को जरूर प्राथमिकता दी जाती थी। मगर देशी गीतों का बहिष्कार नहीं था। नाटकों में संगीत देने के लिए समय की प्रसिद्ध गायिकायें रखी जाती थीं।

बीसवीं शताब्दी में कागज की सुलभता तथा प्रेस के प्रचार के कारण हिन्दी-गद्य-साहित्य का मौखिक रूप लुप्त हो गया।

मुगलकालीन लिखित गद्य-साहित्य के सन्दर्भ में इतिहास, विश्व-इतिहास, अपने परिवार का इतिहास, आत्मकथा, यात्रा-विवरण, पौराणिक कथाएँ, निबन्ध, आलोचना, कानून, गणित, ज्योतिष, भाषाविज्ञान आदि विविध विषयों पर पुस्तकें लिखी गयीं। सूर्यसहस्रनाम उन नाम के गुणों की व्याख्या सहित अकबर ने हिन्दी में लिखवाया। पारसी धर्मगुरु अदर कैवान की एक पुस्तक का, जिसमें फरिश्तों एवं नक्षत्रों की प्रशंसा थी तथा पारसी धर्म के आदेश-उपदेश थे, हिन्दी में अनुवाद लिखा गया।

अकबर के दरबार में एक बार हिन्दी भाषा की प्रकृति पर विचार-विमर्श हुआ कि फारसी के विसगौत 'ऐन' और 'हमजा' से अत्य—शब्द हिन्दी में आकारांत हो जाते हैं, जैसे शहजाद: शहजादा, पुख्त: पुख्ता, सिज्द: सिज्दा, अस्प: अस्पा, जमान: जमाना इत्यादि। उसी प्रकार हिन्दी भाषा के जानकार फजायल खाँ मीर हादी ने बादशाह औरंगजेब से कहा कि फारसी विसगौत शब्द हिन्दी में आकारांत इसलिए हो जाते हैं कि नागरी लिपि में 'ऐन' और 'हमजा' जैसा कोई अक्षर नहीं है। मगर हिन्दी के आकारांत फ़ारसी में लिखने के लिए 'अलिफ' है, किन्तु फारसी के लेखक भ्रमवश हिन्दी के आकारांत शब्दों को फारसी में 'ऐन' और 'हमजा' से लिखते हैं, जैसे बंगाला बंगाल:, मालवा मालव: इत्यादि, जो गलत है। हिन्दी के आकारांत शब्दों को फारसी में सही उच्चारण के लिए 'अलिफ' से लिखा जाना चाहिए। औरंगजेब स्वयं हिन्दी का अच्छा जानकार था, उसकी समझ में बातें आ गयी और उसने वैसे ही लिखने का आदेश जारी कर दिया।

'रणमस्त खाँ', 'रणदूलह खाँ' जैसे खिताब सरदारों को मिलते थे। तालाब का नाम 'हुसेन सागर' और मकबरे का 'नीलकंठ' या 'नीलकुण्ड' रखा गया था। हिन्दी के प्रभाव और नमूने के रूप में ऐसे शब्द काफी रोचक हैं।

प्राय: लिखने और बोलने की भाषा में अन्तर होता है। लोग बोलते कुछ और हैं पर लिखते समय जरा सजी-सँवारी आडम्बरपूर्ण भाषा लिखते हैं। अकबर के समय अनेक भाषाओं के जानकार अबुल फजल ने भाषा का सरलीकरण करके उसे बोलचाल के अधिक निकट पहुँचाने का कार्य किया। औरंगजेब के समय हुत्फुल्ला खाँ ने बहुत देशज शब्दों का प्रयोग वाक्यों और मुहावरों में किया। उसके बनाये वाक्य, सूक्तियाँ, मुहावरे जनता में खूब प्रचलित हुए।

उस समय भी हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा मानी जाती थी, हिन्दी के ग्रन्थों का फारसी में अनुवाद हुआ करता था, वह सम्मान की दृष्टि से देखी जाती थी और हिन्दी न जानने वाला अरबी-फारसी का विद्वान भी शिष्ट-समाज में हास्यास्पद समझा जाता था। मिर्जा शाहरूख बदख्शी के लिए जहाँगीर ने अपने बादशाहनामें में स्वयं लिखा है कि ''बीस साल होते हैं, यह हिन्दुस्तान आया पर हिन्दी भाषा अब तक कुछ भी नहीं जानता।'' दरबारों में हिन्दी का सम्मान था, उसके विद्वानों का आदर था, यों हिन्दी को राज्याश्रय भी मिला हुआ था।

ऐसे अनेक विद्यानुरागी रईस थे जो विद्वानों की भाँति-भाँति से सहायता करते तथा धन-व्यय करके उनकी पुस्तकों की अनेक प्रतिलिपियाँ कराकर वितरित करते थे। प्रकाशन का वह आदि रूप था पर केवल ज्ञान प्रसार के सद्‌उद्देश्य से, प्रकाशक का मुनाफा नहीं था।

नास्तालिक लिपि में लिखी—जिसमें उर्दू-फारसी लिखी जाती है—बहुत-सी तत्कालीन हिन्दी पुस्तकें यत्र-तत्र पुस्तकालयों एव निजी संग्रहों में उपलब्ध है। ब्रिटिश म्युजियम तथा इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी में भी काफी सामग्री है। आज की भाँति मिलों का कागज सुलभ होता और प्रेस की सुविधा होती तो उस समय का प्रचुर हिन्दी साहित्य उपलब्ध होता। शायद तब हिन्दी का उन्नति विस्तार भी बहुत अधिक होता। आधुनिक युग में कागज की मिलें तथा छपाई के प्रेस भाषा और साहित्य की उन्नति में प्रधान कारण है।

साहित्यिक रचनाओं के अतिरिक्त न्यायालय, प्रशासन, राजकीय आदेश, राजनयिक पत्राचार, व्यापार पत्राचार आदि में हिन्दी का खूब प्रयोग होता था। मुगलकाल से ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासनकाल तक वैसे सामान्य व्यवहार में हिन्दी के प्रयोग की अविरल धारा चली आ रही है। एतत् सम्बन्धी बहुत से दस्तावेज अभी देश में उपलब्ध हैं। राष्ट्रीय अभिलेखागार ने उनमें से कुछ का प्रकाशन भी किया है।

सन् 1745 में, नादिरशाह के आक्रमण के छ: वर्ष बाद, एक पुर्तगाली श्री बेमजामिन शुल्ज ने पुर्तगाली भाषा में हिन्दुस्तानी का व्याकरण लिखा और प्रकाशित कराया। श्री जे०एच० केलेनवर्ग ने उसका सम्पादन किया और भूमिका लिखी थी। वह केवल व्याकरण ही नहीं बल्कि भाषा-विज्ञान की दृष्टि से हिन्दी शब्दों की व्युत्पत्ति, रूप परिवर्तन, अर्थ—विचार (सीमेण्टिक्स) भी प्रस्तुत किया है। हिन्दी और फारसी के शब्दों के पुर्तगाली रूपान्तर के नियम भी लिखे गये हैं। नीले रंग की अपनी मूल जिल्द में बँधी वह पुस्तक हिन्दी भाषा के इतिहास की दृष्टि से बहुत महत्त्वपूर्ण है। उसमें काशी के इतिहास के सम्बन्ध में भी संक्षेप से कहा गया है।

सन् 1771 में हिन्दी ब्रजभाषा का व्याकरण लैटिन भाषा में लिखा गया और प्रकाशित हुआ। उसी के साथ हिन्दी की कुछ अन्य बोलियों का व्याकरण तथा शब्दों एवं वाक्यों, मुहावरों आदि का संग्रह भी है। उसमें भी काशी का संक्षिप्त इतिहास मिलता है। उसमें काशी विद्या का केन्द्र मानी गयी है, बल्कि उसे 'युनिवर्सिटी' कहा गया है।

सन् 1778 में लैटिन भाषा में मुगल साम्राज्य में बोली जाने वाली जन-साधारण की भाषा हिन्दी का व्याकरण लिखा गया। उसका प्रकाशन रोम से हुआ था तथा धर्म-प्रचार हेतु पादरियों को हिन्दी सीखने के लिए लिखा गया था। सन् 1778 में ही बंगला भाषा का एक व्याकरण श्री नैथेनियल ब्रासी हाल हेड ने लिखा तथा बंगाल में ही हुगली से छप कर प्रकाशित हुआ। उस समय बिहार तथा पूर्वी उत्तर प्रदेश तक के पूरे क्षेत्र को अंग्रेज बंगाल ही कहते थे। उन दोनों पुस्तकों में भी काशी के इतिहास सम्बन्धी सामग्री है।

फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के साथ ही स्वतन्त्र भाषा के रूप में हिन्दी की प्रतिष्ठा मिली और स्कूल, कॉलेजों में वह विषय के रूप में पढ़ाई जाने लगी। हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकें तैयार हुई। हिन्दी शिक्षा का प्रसार इतना हो चुका था कि उस समय सन् 1800 के करीब से काफी बाद तक, हिन्दी की पाठ्य-पुस्तकों के प्रकाशन में भी लल्लू लालजी ने धनोपार्जन किया।

उसके पहले संस्कृत पाठशालाएँ तो थीं, फारसी के मकतब भी थे, पर स्वतन्त्र विषय के रूप में हिन्दी पढ़ाने की कोई व्यवस्था विद्यालयों में नहीं थी। जिसे पढ़ना होता, वह अपने नगर के कवियों या साहित्यकारों से निजी तौर पर पढ़ लेता था। हिसाब-किताब, व्यावसायिक या निजी पत्र व्यवहार वगैरह सीखने के लिए लड़के महाजनी या व्यापारी कोठियों में शागिर्द होते थे। हिन्दी की व्यापक प्रभुता एवं शक्ति को पहचान कर उसे स्वतन्त्र विषय के रूप में प्रतिष्ठित करने एवं उसके क्रमबद्ध पठन-पाठन को प्रोत्साहित करने का काम पहले विदेशियों ने ही किया। सन् 1875 में श्री जे०डी० बेट्स द्वारा प्रकाशित हिन्दी शब्दकोश की भूमिका से उस समय हिन्दी के विषय में लोगों के विचारों का परिचय मिलता है।

सन् 1847 के करीब पादरी श्री जे०टी० टामसन ने लगभग पचीस हजार शब्दों का एक हिन्दी शब्दकोश तैयार करके प्रकाशित कराया। उसके बाद शेक्सपियर तथा पारबीस के हिन्दुस्तानी शब्दकोश प्रकाशित हुए।

सन् 1820 में शेख वली मुहम्मद 'नजीर'

अकबराबादी (जन्म सन् 1735 दिल्ली में, मृत्यु सन् 1834 आगरे में) के 700 शेरों एवं गजलों का 42 पृष्ठों का एक संग्रह नागरी लिपि में लीथो में छपकर मेरठ से प्रकाशित हुआ था।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा अन्य साहित्यकारों ने हिन्दी गद्य के इतिहास के सम्बन्ध में अपनी हिन्दी साहित्य के इतिहास सम्बन्धी विभिन्न पुस्तकों में जो सामग्री दी है उसकी चर्चा बहुत हो चुकी है, अतएव उसे तथा कविता के इतिहास को प्रस्तुत निबन्ध में छोड़ दिया गया है। केवल उन्हीं सामग्रियों का चयन किया गया है जो अभी तक अज्ञात या अल्पज्ञात है। उनकी सूचना मात्र है। इतिहास नहीं। सम्यक् इतिहास एक निबन्ध में लिखा भी नहीं जा सकता। उसके लिए तो मोटी पुस्तक की अपेक्षा है।

सन् 1850 में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के जन्म के तीन सौ वर्ष पूर्व से ही रीतिबद्ध बहुमुखी उन्नति करती हिन्दी तब तक इतनी आत्मशक्ति अर्जित कर चुकी थी कि उसे किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों से प्रेरणा लेने की आवश्यकता नहीं थी। वह स्वयंप्रभा, स्वयं-विकासमान थी। उन्नति के उच्च स्तर तक पहुँच चुकी थी। प्रतिभाशाली व्यक्ति स्वयं उसका आश्रय लेकर कृतकृत्य होते थे।

ऐसी स्थिति में भारतेन्दु को आधुनिक हिन्दी का जन्मदाता कहने जैसे पूर्वाग्रह कोरे भावुक उद्‌गारों से बचकर हिन्दी के बौद्धिक एवं वैज्ञानिक अध्ययन की ओर बढ़ना चाहिए। यही समय का तकाजा है।

> प्रत्येक महान साहित्यिक रचना जीवन के प्रति एक विशिष्ट दृष्टिकोण दर्शाती है, वास्तविकता का बोध कराती है तथा एक सन्तुलित नैतिक दृष्टि देती है। —**डॉ० एस० राधाकृष्णन**

पुस्तकालयों, शिक्षा संस्थाओं

के लिए

साहित्यिक तथा विभिन्न विषयों की हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत पुस्तकों का विशाल संग्रह

तीन हजार वर्ग फुट में विशाल शोरूम

विश्वविद्यालय प्रकाशन

विशालाक्षी भवन, चौक

(चौक पुलिस स्टेशन परिसर के पार्श्व में)

वाराणसी – 221 001 (उ०प्र०)

Phone & Fax : (0542) 2413741, 2413082

E-mail: sales@vvpbooks.com

यत्र-तत्र-सर्वत्र

मुंशी प्रेमचंद के साहित्य पर शोध के लिए वरिष्ठ फैलोशिप

पिछले कई वर्षों से मुंशी प्रेमचंद के साहित्य पर शोध में संलग्न और पिछले सत्तर वर्षों से प्रेमचंद के नाम पर प्रकाशित होते आ रहे तीन लेखों को तीन विभिन्न लेखकों की मौलिक रचनाएँ सप्रमाण सिद्ध करने से व्यापक चर्चा में आए **डॉ० प्रदीप जैन,** मुजफ्फरनगर को भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय ने वरिष्ठ फैलोशिप प्रदान करके सम्मानित किया है। फैलोशिप के अन्तर्गत डॉ० जैन को दो वर्ष की अवधि में प्रेमचंद की समस्त हिन्दी-उर्दू रचनाओं का प्रकाशन-काल प्रामाणिक रूप से निर्धारित करना होगा।

डॉ० जैन का मानना है कि प्रेमचंद की रचनाओं का काल-निर्धारण किये बिना उनके साहित्य का समग्रता में वैज्ञानिक अध्ययन एवं मूल्यांकन तो किया ही नहीं जा सकता, साथ ही उनकी जीवनी को भी प्रामाणिक आधार नहीं दिया जा सकता।

सवासेर गेहूँ बनाम चालीस किलो चावल

प्रेमचंदजी ने नवम्बर 1924 में एक कहानी लिखी थी—'सवासेर गेहूँ'। एक महात्मा को गेहूँ के आटे की रोटी खिलाने के लिए शंकर किसान ने एक विप्र महाराज से सवासेर गेहूँ उधार लिया। किसान अपनी ओर से बदले में डेढ़ पसेरी गेहूँ खलिहानी के रूप में देता रहा। दुर्भाग्य से सात वर्ष बाद वह विप्र महाराज से महाजन बन चुके थे शंकर से तगादा किया और कहा तुम्हारे हिसाब में साढ़े-पाँच मन गेहूँ (सवासेर गेहूँ के बदले) बाकी है। धर्मभीरु बेचारे शंकर ने 20 वर्ष तक विप्र महाजन के यहाँ कर्ज चुकाने के लिए गुलामी की फिर भी 120 रुपये शेष रह गये। जिसे उसके जवान बेटे ने चुकाने के लिए विप्रजी की चाकरी की। प्रेमचंदजी ने कहानी के अन्त में लिखा है—

"पाठक! इस वृतांत को कपोल-कल्पित न समझिए। यह सत्य घटना है। ऐसे शंकरों और ऐसे विप्रों से दुनिया खाली नहीं है।"

पिछले दिन प्रेमचंदजी की 125वीं जयन्ती के अवसर पर प्रेमचंदजी के पैतृक गाँव लमही में इस मार्मिक कहानी का नाट्य रूपांतर हुआ। जयन्ती की स्मृति स्वरूप बने द्वार पर प्रेमचंदजी की कहानी के पात्रों के चित्र उकेरे गये उनमें सवासेर गेहूँ का पात्र भी है।

क्या आप समझते हैं आजादी के 60 वर्ष बाद शंकर ऐसे किसान और विप्र महाजनों से देश मुक्त हो गया है, कदापि नहीं। आज भी दोनों जीवित हैं—

बिहार के पैपुरा बर्की गाँव के जवाहर मांझी ने 27 वर्ष पूर्व विवाह के लिए एक साहूकार से 40 किलो चावल उधार लिए थे। उस उधार को चुकाने के लिए वह तभी से सप्ताह में 6 दिन प्रतिदिन आठ घण्टे काम करता है, उसे तथा उसके परिवार के लिए एक किलो चावल रोज मिलता है। इसके बावजूद 40 किलो चावल की उधारी चुक नहीं पा रही है। इस सम्बन्ध में मानवाधिकार आयोग ने बिहार के मुख्य सचिव को नोटिस जारी की है।

यह कहानी केवल बिहार की नहीं है, सोनभद्र के आदिवासी भी इसी तरह कर्ज में डूबे हैं। यह सारे देश की कहानी है। नक्सलवाद का शायद यही कारण हैं। काश सत्ता के मद में निमग्न शासक इस दिशा में सोचते, पर कैसे? अधिकार का सुख अत्यन्त मादक होता है।

अनुवाद के लिए सॉफ्टवेयर

संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय एक ऐसे सॉफ्टवेयर उपकरण को विकसित करने की योजना पर काम कर रहा है, जो देश की 22 भाषाओं का आपस में अनुवाद सरल कर देगा। इस सॉफ्टवेयर के विकसित हो जाने के बाद भाषा विशेष को न समझने के बावजूद कोई भी व्यक्ति किसी भी भाषा में लिखी सामग्री को अपनी भाषा में जान और समझ लेगा। इस दिशा में सीडेक, पुणे में शोध और अध्ययन का काम चल रहा है। सीडेक के महानिदेशक श्रीनिवास रामकृष्णन के अनुसार पंजाबी से उर्दू, उर्दू से पंजाबी में अनुवाद करने वाले सॉफ्टवेयर को विकसित कर लिया गया है। बांगला का सॉफ्टवेयर भी लगभग तैयार है। अन्य भाषाओं पर काम हो रहा है।

देश के सभी विश्वविद्यालयों में परीक्षाएँ एक साथ

देशभर के समस्त कॉलेज के छात्रों को विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) ने ऐसी कार्य योजना को अन्तिम रूप दिया है जिससे जल्द ही देशभर के समस्त विश्वविद्यालयों में एक साथ न केवल परीक्षाएँ आयोजित हो सकेंगी बल्कि छात्रों को परिणाम भी साथ-साथ ही मिलेंगे। यूजीसी के नए वार्षिक कैलेण्डर के अनुसार सभी विश्वविद्यालय के परीक्षा परिणाम जून से पहले घोषित कर दिया जाएगा। इसके अतिरिक्त नए विद्यार्थियों की कक्षाएँ अगस्त के प्रथम सप्ताह से प्रारम्भ हो जाएँगी। यूजीसी ने इस योजना को 26 फरवरी को मंजूरी प्रदान कर भारत सरकार के गजट में प्रकाशन को दे दी है जिस दिन गजट प्रकाशित होगा यह योजना प्रभावी मानी जाएगी। यूजीसी द्वारा जारी विज्ञप्ति के अनुसार एक्सपर्ट

कमेटी के द्वारा बनाए गए कैलेण्डर के अनुसार द्वितीय वर्ष के छात्रों की कक्षाएँ जुलाई के तीसरे सप्ताह से प्रारम्भ जाएँगी।

अमेरिकी विवि में हिन्दुत्व की पढ़ाई

हिन्दुत्व में भारतीय मूल के छात्रों की बढ़ती दिलचस्पी को देखते हुए अमेरिका की न्यूजर्सी स्थित रटगर्स यूनिवर्सिटी दुनिया के इस सबसे प्राचीन धर्म के अध्ययन के लिए एक व्यापक कार्यक्रम शुरू कर रही है।

विश्वविद्यालय में हिन्दुत्व पर वाचन परम्परा, हिन्दू संस्कार, महोत्सव और प्रतीक के कोर्स स्नातक स्तर पर शामिल होंगे। साथ ही, हिन्दू दर्शन, हिन्दुत्व और आधुनिकता भी पाठ्यक्रम में शामिल होगा। इसके अलावा नान क्रेडिट कोर्स में योग, ध्यान और हिन्दू शास्त्रीय व लोकनृत्य शामिल किए जाएँगे।

रटगर्स समर हिन्दू स्टडीज प्रोग्राम के सलाहकार समिति के अध्यक्ष हिमांशु पी शुक्ला के अनुसार एक सार्वजनिक विश्वविद्यालय है। साथ ही रटगर्स मिडलसेक्स काउंटी में बड़ी संख्या में भारतीय मूल के लोग रहते हैं।

हिन्दी सम्मेलन न्यूयॉर्क में

संयुक्त राष्ट्र में हिन्दी को स्थान दिलवाने के प्रयास स्वरूप हिन्दी पर एक विशेष सम्मेलन न्यूयॉर्क में आयोजित किया जाएगा। जुलाई 2007 में इस सम्मेलन का आयोजन संयुक्त राष्ट्र के मुख्यालय में उद्घाटन समारोह के साथ होगा। तीन दिनों तक चलने वाले 'विश्व मंच पर हिन्दी सम्मेलन में हिन्दी भाषा की महत्ता' पर चर्चा की जाएगी। विदेशी राज्यमंत्री आनन्द शर्मा का प्रयास है कि संयुक्त राष्ट्र में अन्य भाषाओं के साथ हिन्दी को भी शामिल किया जाए।

एलएलबी प्रवेश परीक्षा हिन्दी में

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग देश के सभी विश्वविद्यालयों द्वारा अंग्रेजी में एलएलबी की प्रवेश परीक्षा कराए जाने से असन्तुष्ट है। यूजीसी ने सभी विश्वविद्यालयों को पत्र लिखकर सूचित किया है कि वे अपने यहाँ एलएलबी की प्रवेश परीक्षा अंग्रेजी के अतिरिक्त हिन्दी में भी कराएँ। साथ ही विधि साहित्य को भी हिन्दी में उपलब्ध कराने को कहा है। अभी तक विधि साहित्य देश के तमाम विश्वविद्यालयों में सिर्फ अंग्रेजी में उपलब्ध है।

नौ लाख का पाठ्यक्रम

भारतीय प्रबन्धन संस्थान (आईआईएम) अहमदाबाद ने वरिष्ठ पदों की चाहत रखने वाले प्रबन्धकों और प्रशासकों की दक्षता बढ़ाने के लिए परास्नातक स्तर एक नए कार्यक्रम की शुरुआत की है। पब्लिक मैनेजमेंट एण्ड पॉलिसी नामक यह कार्यक्रम पूर्णकालिक एक वर्ष का है। फीस है नौ लाख रुपये।

पेरिस पुस्तक मेला 2007 में भारतीय कृति और कृतिकार

पेरिस में 23 तथा 27 मार्च 2007 को आयोजित पेरिस पुस्तक मेला 2007 में सम्मानित अतिथि, भारतीय लेखकों की कृतियों और लेखकों को प्रमुख स्थान मिला। 30 भारतीय और फ्रेंच लेखकों के बीच आदान-प्रदान हुआ। फ्रांसीसी प्रकाशकों ने अंग्रेजी ही नहीं भारतीय भाषाओं में प्रकाशित कृतियों के फ्रेंच अनुवाद में भी रुचि प्रगट की। इस प्रकार भारत-फ्रांस सांस्कृतिक सम्बन्धों की शुरुआत हो रही है।

महादेवी वर्मा जन्मशती

कोलकाता महानगर की साहित्यिक संस्था एवं त्रैमासिक पत्रिका 'साहित्य-त्रिवेणी' के तत्वावधान में साहित्य-कुम्भ शृंखला-2 के अन्तर्गत महीयसी महादेवी वर्मा जन्मशती महोत्सव पश्चिम बंग बंगला अकादमी के जीवनानंद सभागार में सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम का प्रारम्भ अध्यक्ष प्रो० डॉ० तनूजा मजूमदार द्वारा महादेवी वर्मा के चित्र पर माल्यार्पण से हुआ। तत्पश्चात विभिन्न संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने महादेवीजी के चित्र पर पुष्पांजलि दी। इस अवसर पर सीमा विश्वास द्वारा निराला विरचित 'सरस्वती वंदना' व महादेवी विरचित गीत 'हे ! चिर महान' के गायन से वातावरण सुरभित हो उठा। साहित्य-त्रिवेणी जनवरी-मार्च 2007 का लोकार्पण सभाध्यक्षा डॉ० तनूजा मजूमदार के हाथों अनुष्ठित हुआ। पत्रिका के सम्पादक कुँवर वीर सिंह मार्तण्ड ने साहित्य-त्रिवेणी पत्रिका की गतिविधियों पर प्रकाश डाला। सारस्वत अनुष्ठान कार्यक्रम के अन्तर्गत शुक्ला चौधरी ने महादेवी की रहस्यानुभूति, जितेन्द्र धीर ने महादेवी और प्रकृति चित्रण, प्रभाकर चतुर्वेदी ने महादेवी की विशेषताएँ व श्यामलाल उपाध्याय ने विरह की परम्परा महादेवी की रहस्यानुभूति आदि पर अपने-अपने विचार प्रस्तुत किए। अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ० मजूमदार ने आधुनिक परिप्रेक्ष्य में महादेवी के आकलन का सुझाव दिया। उन्होंने महादेवी को मानवीय मूल्यों एवं जीवन के क्रन्दन से सम्पृक्त व्यक्तित्व बताकर स्पष्ट किया कि महादेवी को और परखने समझने की आवश्यकता है।

मारवाड़ी बनाम राजस्थानी

राजस्थान विधानसभा का प्रस्ताव है कि राजस्थानी को वैधानिक मान्यता दी जाय। इसे लेकर राजस्थान में विरोध मुखर हो रहा है। राजस्थानी के परिवेश में मारवाड़ी को मान्यता देने से शासकीय भाषा हिन्दी पर प्रभाव पड़ेगा। राजस्थानी भाषा संकल्प विरोधी समिति ने अपने सम्मेलन में राजस्थानी को आठवीं अनुवर्ती सूची में सम्मिलित करने का विरोध किया है। उनका कहना है कि राजस्थान के हर क्षेत्र की विभिन्न बोलियाँ हैं उन्हें एक भाषा नहीं माना जा सकता। आर्य समाज के कार्यकारी अध्यक्ष सत्यव्रत समवेदी का कहना है कि मारवाड़ी राज्य की जनसंख्या के 15 प्रतिशत लोग जो पश्चिम राजस्थान में रहते हैं उन तक सीमित है। राजस्थान में हाड़ोती, मेवाड़ी, मालवी, वागडी, ब्रजभाषा, ढुढारी, उर्दू, सिंघी, शेखावाटी अनेक बोलियाँ हैं, वे प्रभावित होंगी। मारवाड़ी को सरकारी भाषा स्वीकारने से प्रदेश के बहुभाषा भाषी सभी अभी तक हिन्दी बोलते-लिखते आ रहे हैं।

राष्ट्रपति महाभाग्या, सुस्वागतम् यवन देशे!

राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम का ग्रीस के राष्ट्रपति कारलोस पापोलियस ने 26 अप्रैल 2007 को एथेंस में संस्कृत में स्वागत किया। राष्ट्रपति कलाम तथा भारतीय प्रतिनिधि आश्चर्य मिश्रित आनंदित। राष्ट्रपति पापोलिस ने जर्मनी में संस्कृत की शिक्षा ग्रहण की। उनका मत है कि भारत और ग्रीस दो महान प्राचीन सभ्यताओं की जन्मस्थली है।

ज्ञान-प्रवाह दशाब्द पूर्ति

काशी में गंगातट पर 16 अप्रैल 1997 स्थापित ज्ञान-प्रवाह ने 16 अप्रैल 2007 को अपने कार्यकाल के दस वर्ष पूर्ण किये। दशाब्द पूर्ति के के उपलक्ष्य में ज्ञान-प्रवाह ने काशी के दो वरिष्ठ विद्वानों का सारस्वत सम्मान किया।

महामहोपाध्याय **पं० विश्वनाथ शास्त्री दातार** को काशी की पाण्डित्य परम्परा के संवर्द्धन हेतु एवं **प्रो० ए०के० नारायण** को भारतीय विद्या को बाहर विदेशों में ख्याति दिलाने हेतु सम्मानित किया गया।

प्रो० आर०सी० शर्मा व्याख्यानमाला के अन्तर्गत प्रथम व्याख्यान हार्वर्ड विश्वविद्यालय, अमेरिका में भारतीय कला के प्रसिद्ध विद्वान् प्रो० प्रमोदचन्द्र का हुआ। **डॉ० प्रमोदचन्द्र** ने कहा—भारतीय कला के अध्यापन एवं शोध के क्षेत्र में पाश्चात्य विद्वानों का महत्त्वपूर्ण योगदान है, किन्तु विश्लेषक क्रम में उन्होंने भारतीय कला की अन्तर्दृष्टि की ओर ध्यान न देकर कला के बाह्य सौन्दर्य की ओर ध्यान दिया और उसकी तुलना पाश्चात्य कला से करने में रुचि दिखलाई। डॉ० प्रमोदचन्द्र ने भारतीय विद्या के कुछ पाश्चात्य विद्वानों यथा—जेम्स प्रिंसेप, कनिंघम, जेम्स वर्जेस, सरजॉन मार्शल आदि के भारतीय कला, पुरातत्त्व, अभिलेख शास्त्र के क्षेत्र में उनके अमूल्य योगदानों की भी चर्चा की। इसी क्रम में उन्होंने कुमार स्वामी एवं वासुदेवशरण अग्रवाल के योगदान की ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए बताया कि इन दोनों विद्वानों ने भारतीय मूर्तिकला की आत्मा एवं उसके आन्तरिक सौन्दर्य को भारतीय दृष्टि प्रदान किया।

इस अवसर पर संस्था के अध्यक्ष श्री सुरेश नेवटिया ने प्रो० आर०सी० शर्मा को श्रद्धांजलि

अर्पित करते हुए ज्ञान-प्रवाह के प्रति उनके किये गये कार्यों को अमूल्य बतलाया। ज्ञान-प्रवाह की प्रबन्ध न्यासी श्रीमती विमला पोद्दार ने आगन्तुकों का स्वागत किया।

ज्ञान-प्रवाह के प्रमुख कार्य

प्राचीन लिपियों का अध्ययन एवं शोध, जेम्स प्रिंसेप स्मृति व्याख्यानमाला, संग्रहालय-कला-मण्डप, काशी से सम्बन्धित छायाचित्रों, पारदर्शियों से युक्त एक अभिलेखागार, गहन अध्ययन केन्द्र, ज्ञान-प्रवाह फेलोसिप, Indian Art Treasure का प्रकाशन, पुरातात्त्विक सर्वेक्षण, प्रेरणा-प्रवाह, संस्कृत नाटकों का मंचन, श्रौत याग (वैदिक यज्ञ), संस्कार एवं अनुष्ठान केन्द्र, 700 पाण्डुलिपियों तथा ल० 9000 पुस्तकों से युक्त पुस्तकालय।

भारत और चीन में भी सम्बन्ध

सत्तर वर्ष पूर्व 14 अप्रैल 1937 रविन्द्रनाथ टैगोर ने इस मैत्री सम्बन्ध का शुभारम्भ किया था—

विश्वभारती में चीनी-भवन का उद्घाटन करते समय कविवर रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भाषण देते हुए कहा—मानव इतिहास की स्मरणीय सच्चाई यह है कि एक ऐसा मार्ग खोला जाय जिसके द्वारा जातियाँ अपनी बुद्धियों की एकता और आम मानव के प्रति अपने पारस्परिक कर्त्तव्यों का अनुभव कर सकें। परन्तु यह रास्ता यन्त्रों अथवा मशीनगनों के द्वारा साफ नहीं किया जाना चाहिए। वास्तव में यह एक महान दिवस है जिसकी हम बहुत काल से इच्छा करते थे। अब मैं अपने लोगों की ओर से भूत के गर्भ में निहित अपनी पुरानी प्रतिज्ञा को फिर से लेने में समर्थ हुआ हूँ। यह प्रतिज्ञा क्या थी। यही कि हम भारत और चीन के लोगों में संस्कृति और मित्रता का सम्बन्ध स्थापित करेंगे। हमारे इस सहयोग की बुनियाद हमारे पूर्वजों ने 1800 वर्ष पूर्व अनन्त धैर्य और त्याग के साथ डाली थी। जब मैं चीन गया था मैंने चीनियों को भारत आने का निमंत्रण दिया था और इसी निमन्त्रण के परिणाम स्वरूप इस भवन की स्थापना की गई है कि जो उस महान समझ के चिह्न हैं कि जो हमारे अथक परिश्रम से पैदा होगी।

आज शिक्षा किस प्रकार उद्योग का रूप धारण करता जा रहा है इसका तात्कालिक उदाहरण है—उद्योग नगरी में मुम्बई विश्वविद्यालय ने विश्वविद्यालय को एक लिमिटेड कम्पनी के रूप में परिवर्तित करने का प्रस्ताव रखा है। विश्वविद्यालय ऐसी कम्पनी होगी जिसके शेयर स्टाक मार्केट में खरीदे-बेचे जाएँगे। इसके लिए आवश्यक अभिलेख तैयार किये जा रहे हैं। यदि यह हो गया तो देश में स्थित अन्य तथा स्थापित होने वाले नये विश्वविद्यालय लिमिटेड कम्पनी बन जाएँगे और प्रतिदिन शेयर मार्केट में उनके भाव खुलेगा।

प्रकाशन रोकने का सरकार को अधिकार

उच्चतम न्यायालय के अनुसार संविधान में निर्देशित विचार-स्वातंत्र्य के बावजूद सरकार ऐसे किसी भी प्रकाशन को रोक सकती है या सील कर सकती है जिससे सार्वजनिक ताने-बाने को नुकसान पहुँचने की आशंका है। न्यायमूर्ति वी०पी० सिंह व एच०एस० बेदी की पीठ ने कर्नाटक सरकार द्वारा 12वीं शताब्दी के संत बासवेश्वरा (बास वत्रा) पर लिखित उपन्यास **धर्मकारण** को प्रतिबन्धित करने के निर्णय के सम्बन्ध में यह फैसला सुनाया। इस उपन्यास में संत के विरुद्ध अपमानजनक टिप्पणियाँ की गई हैं। इसे 1995 में कर्नाटक सरकार ने प्रतिबंधित कर दिया था।

भाषाओं और बोलियों का सर्वेक्षण शीघ्र

भारत सरकार देश के विभिन्न भागों में बोली जानेवाली भाषाओं का पता लगाने के लिए पहली बार एक सर्वेक्षण कराने जा रही है। मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री डी० पुरंदेश्वरी ने राज्यसभा में बताया कि देश में एक भाषायी सर्वेक्षण करवाने का प्रस्ताव है जिसकी रिपोर्ट सर्वे शुरू होने के दस वर्ष के पश्चात उपलब्ध होगी। इसके लिए 11वीं योजना के अन्तर्गत 280 करोड़ रुपये तथा 12वीं योजना के दौरान 308 करोड़ रुपये के प्रावधान का अनुमान है। इस प्रस्तावित सर्वेक्षण का लक्ष्य देश की भाषायी विविधता एवं बहुभाषावाद, अंतरभाषायी सम्बन्ध और भाषा की सक्रियता से सम्बन्धित स्थिति का सुचारु एवं व्यापक लेखा-जोखा प्रस्तुत करना है। ऐसा करते समय दस्तावेज बनाने, विभिन्न प्रकार के आँकड़े तैयार करने, बोलचाल एवं लिखित स्वरूप की भाषा से सम्बन्धित दस्तावेज तैयार करने में उच्च प्रौद्योगिकी की सहायता ली जायेगी और मुद्रण एवं इलेक्ट्रॉनिक दोनों रूप में व्यापक भाषायी सामग्रियाँ तैयार की जायेगी। वर्ष 1991 की जनगणना के अनुसार देश में 114 भाषा मौजूद हैं और 216 बोलियाँ जिनमें से प्रत्येक भाषा 10 अथवा इससे अधिक लोगों द्वारा बोली जाती हैं। वर्ष 2001 की जनगणना हेतु अनन्तिम आँकड़े के अनुसार भारत में भाषाओं की संख्या 114 से 122 हो गयी है।

कर्तार सिंह दुग्गल को साहित्य अकादमी का सर्वोच्च सम्मान

पद्मभूषण से सम्मानित एवं राज्यसभा के मनोनीत सदस्य रह चुके पंजाबी, उर्दू और अंग्रेजी के लेखक **कर्तार सिंह दुग्गल** को साहित्य अकादमी का फैलो 'महत्तर सदस्यता' बनाया गया। अकादमी के अध्यक्ष एवं उर्दू के प्रख्यात आलोचक डॉ० गोपीचंद नारंग ने 90 वर्षीय श्री दुग्गल को समारोह में अकादमी की महत्तर सदस्यता प्रदान की।

प्रसादजी की पाण्डुलिपि

साहित्यमर्मज्ञ एवं साहित्यसेवी स्व० मुरारीलालजी केडिया ने श्री रामरत्न पुस्तक भवन में दुर्लभ ग्रन्थों एवं पत्रिकाओं के साथ हिन्दी के मूर्धन्य साहित्यकारों की पाण्डुलिपियों, चित्र एवं उनके द्वारा उपयोग की गई सामग्रियों जैसे प्रेमचंदजी के वस्त्र-चश्मा-जूते-ड्रेस, मैथिली शरणजी गुप्त की छड़ी, आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र एवं रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा की दावात आदि का संग्रह किया था। पर बाबू जयशंकर प्रसाद की कोई पाण्डुलिपि नहीं थी।

प्रसादजी अपनी पाण्डुलिपि किसी को नहीं देते थे। मुद्रक से भी वापस ले लेते थे। उनकी पुस्तक 'तितली' बजरंगबली प्रेस, जालपादेवी में केडियाजी के घनिष्ट मित्र स्व० बजरंगबली गुप्त प्रकाशित कर रहे थे। केडियाजी ने उनसे आग्रह किया कि '*तितली*' का एक अध्याय संग्रह के लिए दे दें। बजरंगबली जी ने पहले तो मना कर दिया। बोले कि प्रसादजी पाण्डुलिपि वापस ले लेते हैं। केडियाजी ने उन्हें समझाया कि पन्ना गिनकर थोड़ी न लेते हैं। एक अध्याय कम होगा तो क्या पता लगेगा। बहुत मान-मनौव्वल करने पर बजरंगबली जी ने साहस करके एक अध्याय दे दिया। जब प्रसादजी पुस्तकालय में आए तो केडियाजी ने उन्हें कहा कि आपकी पाण्डुलिपि भी मेरे संग्रह में है और उन्हें '*तितली*' का अध्याय दिखा दिया। प्रसादजी चमत्कृत रह गए। **—गगनेन्द्रकुमार केडिया**

पुष्प की अभिलाषा

पिंजरे के द्वार से कहता हूँ याद रखो, कौम को जिन्दा रखो, जीते रहो, शाद रहो... पाँच जुलाई 1921 को बिलासपुर जेल के फाटक पर राष्ट्रकवि पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी '*दद्दा*' के यह उद्गार आज भी मानो दीवार पर लिखी इबारत की तरह हमें झकझोर कर कुछ कहना चाहते हैं। 1. दद्दा ने जेल जाने से पहले 12 मार्च 1922 को उन्हें विदा करने बड़ी संख्या में आये लोगों को सम्बोधित करते हुए यह पंक्तियाँ कहीं थीं। इन लोगों में कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान और पण्डित रविशंकर शुक्ल जैसी विभूतियाँ भी शामिल थीं। बाद में मार्च में जबलपुर जेल स्थानान्तरित होने के पूर्व उन्होंने बिलासपुर जेल में ही ...पुष्प की अभिलाषा.. का अमर गीत रचा था। यह गीत आज भी देशभर में देशप्रेम का जज्बा जगाता है।

सम्मान-पुरस्कार

संस्कृतज्ञ राममूर्ति शर्मा को मूर्तिदेवी पुरस्कार

हिन्दी और संस्कृत विद्वान **डॉ० राममूर्ति शर्मा** और गुजराती के साहित्यकार **नारायण महादेव देसाई** को क्रमश: वर्ष 2005 और 2004 के मूर्तिदेवी पुरस्कार के लिए चुना गया है। कर्नाटक के राज्यपाल टी०एन० चतुर्वेदी की अध्यक्षता में मूर्तिदेवी पुरस्कार बोर्ड की बैठक में यह निर्णय किया गया। डॉ० राममूर्ति शर्मा को उनकी रचना 'भारतीय दर्शन की चिंतनधारा' के लिए वर्ष 2005 के मूर्तिदेवी पुरस्कार के लिए चुना गया है।

महाश्वेता देवी को दक्षेस साहित्य पुरस्कार

बंगला की जानी-मानी उपन्यासकार **महाश्वेता देवी** को विगत तीन अप्रैल को दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय संघ (दक्षेस) साहित्य पुरस्कार से सम्मानित किया गया। 14वें दक्षेस शिखर सम्मेलन (तीन और चार अप्रैल) के अवसर पर दक्षिण एशियाई देशों के लेखकों नाट्यकारों और साहित्यकारों का दो दिवसीय सम्मेलन भी हुआ। इस सम्मेलन में अफगानिस्तान के रचनाकार ने भी भाग लिया। सम्मेलन का विषय था (शब्द) संस्कृति और पहचान, दक्षिण एशिया संवाद, जिस पर पाँच आयोजित हुए।

सुधांशु चतुर्वेदी को 'अनुवादश्री पुरस्कार'

भारतीय अनुवाद परिषद् ने वर्ष 2006-07 के 'डॉ० गार्गी गुप्ता अनुवादश्री' पुरस्कार बहुभाषाविद प्रतिष्ठित वरिष्ठ साहित्यकार **डॉ० सुधांशु चतुर्वेदी** को प्रदान करने का निर्णय किया है। यह पुरस्कार उनके संस्कृत से मलयालम और मलयालम से हिन्दी में पिछले चार से अधिक दशकों में की गई उत्कृष्ट अनूदित कृतियों के लिए सम्मानित किया गया।

डॉ० चतुर्वेदी की अब तक हिन्दी, संस्कृत, मलयालम एवं अंग्रेजी में 118 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिसमें 50 से अधिक अनूदित कृतियाँ हैं। अनुवाद के क्षेत्र में उनकी इस तपस्या के फलस्वरूप उन्हें यह अनुवादश्री पुरस्कार प्रदान किया गया है।

डॉ० चतुर्वेदी को अब तक 18 पुरस्कार प्राप्त हो चुके हैं, जिनमें भारतीय शिशु परिषद् पुरस्कार, रांगेय राघव पर्यटन पुरस्कार, केरल साहित्य अकादमी का एंडोमेंट पुरस्कार, उत्तर प्रदेश हिन्दी का सौहार्द सम्मान, केन्द्रीय साहित्य अकादमी का अनुवाद पुरस्कार, राष्ट्रभाषारत्न राष्ट्रीय सम्मान, सहस्राब्दी राष्ट्रीय सम्मान, मानवाधिकार सहस्राब्दी, हिन्दी मार्तण्ड, विद्यावारिधि, वाचस्पति मनुमित्रा पुरस्कार, भारतमाता, वंदेमातरम्, ब्राह्मण शिरोमणि आदि प्रमुख हैं।

वात्सल्य सम्मान

पद्मा बिन्नानी फाउण्डेशन ने बाल साहित्य लेखन के लिए **श्री हरिकृष्ण देवसरे** को वात्सल्य सम्मान से विभूषित किया। श्री लक्ष्मीमल सिंघवी ने सम्मान स्वरूप सरस्वती की प्रतिमा, प्रशस्ति-पत्र तथा एक लाख रुपये की राशि प्रदान की।

डॉ० दिनेश चमोला 'शैलेश' को 'नातालि अनुवाद पुरस्कार'

'विकल्प' पत्रिका के सम्पादक **डॉ० दिनेश चमोला 'शैलेश'** को अनुवाद चिंतन पर लिखित उनकी पुस्तक 'अनुवाद और अनुप्रयोग' को अनुवाद की शीर्षस्थ संस्था भारतीय अनुवाद परिषद, दिल्ली द्वारा वर्ष 2006-2007 के 'नातालि अनुवाद पुरस्कार' हेतु चयनित किया गया है। यह पुरस्कार प्रति वर्ष हिन्दी भाषा में रचित अनुवाद चिंतन पर किसी एक मौलिक प्रकाशित पुस्तक के लिए अनुवाद क्षेत्र में सक्रिय रूप से कार्य करने वाले विद्वान को प्रदान किया जाता है।

स्पेन के लेखक पुरस्कृत

स्पेन के 76 वर्षीय कवि **एण्टोनियो गैमोनेडा** को स्पेन के सर्वोच्च पुरस्कार सर्वेन्टीज से पुरस्कृत किया गया। यह पुरस्कार किंग नुयां कार्लोस ने 16वीं शताब्दी के 'डॉन क्विग्जोट' के सुप्रसिद्ध लेखक एम०डी० सर्वेन्टीज की जन्मभूमि में प्रदान किया गया। पुरस्कार की राशि 1,20,000 डालर है। एण्टोनियो का सारा जीवन अत्यन्त कष्ट और गरीबी में बीता था।

किरन देसाई ऑरेन्ज पुरस्कार के लिए नामित

भारतीय मूल की किरन देसाई के बुकर पुरस्कार विजेता उपन्यास 'द इनहेरिटेन्स ऑफ लॉस' को 30,000 पौंड के उपन्यास पर ऑरेन्ज पुरस्कार के लिए नामित किया गया है। यह पुरस्कार अंग्रेजी की महिला लेखिका को दिया जाता है।

उदयराज सिंह स्मारक सम्मान समारोह

डॉ० रामदरश मिश्र ने प्रतिष्ठित साहित्यिक पत्रिका 'नई धारा' द्वारा पटना स्थित तारामण्डल सभागार में आयाजित तृतीय उदयराज सिंह स्मारक व्याख्यान के तहत 'मैं रामचरितमानस क्यों पढ़ता हूँ' विषय पर बोलते हुए कहा—भारतीय हिन्दी समाज की सामाजिक-सांस्कृतिक एकता को सबसे अधिक मजबूती 'रामचरितमानस' से मिली, जिस कारण अनेक विदेशी आक्रांताओं के नाना हमलों के बावजूद इस देश की अखण्डता बनी हुई है। 'रामचरितमानस' एक महान जीवन-दर्शन है, जिससे भारत की सामाजिक बुनावट को जानने में सुविधा होती है। जो लोग इसे केवल धार्मिक दृष्टि से देखते हुए दकियानुसी ख्यालों में जीते हैं, वास्तव में उन्हें भारत की सांस्कृतिक-चेतना एवं मनुष्य की गरिमा का बोध नहीं होता। कुछ लोग अपने को प्रगतिशील दिखाने की होड़ में आज 'रामचरितमानस' की फूहड़ आलोचना कर रहे हैं, लेकिन उत्तर आधुनिक समाज में जो नाना प्रकार की जड़ता आज देखने को मिल रही है, उस गतिरोध को केवल 'रामचरितमानस' जैसी कृति के मार्गदर्शन से ही खत्म की जा सकती है। जिस ग्रन्थ ने दुनिया को मॉरीशस, फीजी जैसे अनेक मुल्कों में रह रहे भारतीयों को जीने का पुरुषार्थ दिया, आज उसकी आलोचना उसके ही मुल्क में एक फैशन के तहत हो रही है। लोग इस ग्रन्थ की आलोचना कर अपने को आधुनिक दिखाना चाहते हैं, जबकि आधुनिक समाज के निर्माण का श्रेय इसी ग्रन्थ को जाता है। मैं जब-जब इस ग्रन्थ को पढ़ता हूँ, तब-तब अपने को इस देश के कोटि-कोटि जनसामान्य के अधिक निकट महसूस करता हूँ।

'नई धारा' द्वारा आरम्भ किए गए सम्मान अर्पण कार्यक्रम के अन्तर्गत साहित्यकार उदयराज सिंह की धर्मपत्नी श्रीमती शीला सिन्हा ने 'उदयराज सिंह स्मृति सम्मान' से डॉ० रामदरश मिश्र को सम्मानित करते हुए उन्हें एक लाख रुपये का ड्रॉफ्ट सहित सम्मान-पत्र एवं स्मृति-चिह्न भेंट किया। इसके उपरान्त मुख्य अतिथि डॉ० रामदरश मिश्र ने दिल्ली के प्रसिद्ध साहित्यकार हरिपाल त्यागी, राँची के डॉ० सिद्धनाथ कुमार तथा लखनऊ के नाटककार राजेश कुमार को 'नई धारा रचना सम्मान' से विभूषित किया, जिसके तहत उन्हें 25-25 हजार रुपये के ड्रॉफ्ट सहित सम्मान-पत्र और स्मृति-चिह्न भेंट किये गये। इस अवसर पर सम्मानित साहित्यकारों ने अपने-अपने उद्बोधन में 'नई धारा' के साहित्यिक संकल्पों का स्वागत करते हुए अपने हर सम्भव सहयोग से इस पत्रिका को समृद्ध करने का आश्वासन दिया।

आरम्भ में स्वागत करते हुए 'नई धारा' के सम्पादक प्रमथराज सिंह ने कहा कि 'नई धारा' केवल साहित्यिक-प्रकाशन नहीं है, बल्कि हिन्दी सेवा के क्षेत्र में हमारे परिवार की हिन्दी सेवा का वृहत् संकल्प भी है।

आचार्य निरंजन सम्मान

आचार्य निरंजननाथ स्मृति सेवा संस्थान के सहयोग से साहित्यिक पत्रिका 'सम्बोधन' द्वारा प्रतिवर्ष दिया जाने वाला आचार्य निरंजन सम्मान इस वर्ष कथा विधा की पुस्तक पर दिया जायगा।

पुरस्कार रचनाकार को पन्द्रह हजार रुपये नकद, शाल, स्मृति-चिह्न एवं प्रशस्ति-पत्र भेंट किया जायगा।

इस 9वें अखिल भारतीय पुरस्कार हेतु गत पाँच वर्षों (2002 से 2006) में प्रकाशित कथा विधा की पुस्तक की तीन प्रतियाँ 31 दिसम्बर 2007 तक—संयोजक, आचार्य सम्मान, सम्बोधन, चाँदपोल, कांकरोली, राजस्थान के पते पर आमंत्रित है।

आपका पत्र

मार्च के 'भारतीय वाङ्मय' में 'प्रसाद'जी के सम्बन्ध में खोजपूर्ण आलेख पढ़कर प्रसन्नता हुई। शब्दों से किसी रचना का अर्थ तो समझा जा सकता है, पर रचनाकार के जीवन के अंतरंग प्रसंगों की जानकारी उस रचना के मर्म को समझने में सहायक होती है। आपका आलेखक 'प्रसाद' साहित्य का अध्ययन-अध्यापन करने वाले विद्यार्थियों-अध्यापकों के लिए बहुमूल्य सिद्ध होगा।

—**डॉ० छैलबिहारीलाल गुप्त,** अलीगढ़

मार्च अंक में जयशंकर प्रसाद पर आलेख बहुत पसन्द आया। प्रसाद की ये पंक्तियाँ जो 'आँसू' से ली गई हैं, काव्य-कला की पराकाष्ठा हैं—

तुम स्पर्शहीन अनुभव सी
नन्दन-तमाल के तल से,
जग छा दो श्याम-लता सी
तन्द्रा पल्लव विह्वल से।

इसी अंक में कमलेश्वर पर दी गई सामग्री भी स्तरीय है।

अप्रैल अंक में डॉ० बच्चन सिंह, अच्युतानन्द मिश्र, डॉ० देवव्रत जोशी के आलेख पठनीयता से भरपूर हैं। पत्रिका के स्तर में धीरे-धीरे सराहनीय सुधार हो रहा है। पुस्तक समीक्षा का स्तम्भ उपयोगी है। यत्र-तत्र-सर्वत्र में सचित सूचनाएँ लेखकों और पाठकों की जानकारी में वृद्धि करती हैं। विशिष्ट पत्र-पत्रिका स्तम्भ में दी गई सूचनाएँ सम्पादकीय उदारता का द्योतक है।

—**भगवतीशरण मिश्र,** नई दिल्ली

'भारतीय वाङ्मय' का मार्च, 2007 अंक देखकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई है। प्रसाद की 'श्यामा' को आपने खूब खोज निकाला। इस खोज से आपने पाठक जगत को उपकृत किया है, बारम्बार बधाई। 'यत्र-तत्र-सर्वत्र' स्तम्भ के अन्तर्गत गतिविधियों की एक घनीभूत झलक आज के घोर उपभोक्तावादी परिवेश में मन प्राण को आह्लादित करने वाली शीतल मन्द सुगन्ध बयार सी लगती है। इससे साहित्यिक समृद्धि का भी एहसास होता है। समारोहों का संक्षिप्त विवरण भी पत्रिका के आकर्षण का एक प्रमुख बिन्दु है। साहित्य के महत्त्व को रेखांकित करने वाली आपकी सजग दृष्टि निश्चित रूप से स्तुत्य है।

—**श्याम विद्यार्थी,** इलाहाबाद

आपने ज्ञान के उद्योग की जो चर्चा छेड़ी है वह भारत के विकास का ऐसी नब्ज है जो सकल राष्ट्रीय उत्पाद से आगे के समावेशी विकास के अन्तराल की भयानकता तथा क्रूरता तथा मूढ़ता के प्रति आगाह करती है। बौद्धिक सम्पदा अधिकार, पेटेंट, कापीराइट, वित्तीय तथा व्यापारिक सम्बन्ध और राजनायिक सूचनाएँ उसके अन्तर्गत आती हैं। अत: जब पुस्तक-प्रकाशन संचार क्रान्ति तथा मुद्रण क्रान्ति के सहवर्तन में एक उद्योग होता जा रहा है तब प्रकाशक तथा लेखक के अधिकारों का भी द्विपक्षीय तालमेल होना चाहिए। कापीराइट और रायल्टी की कारस्तानियों से भी हिन्दी में उत्तम ज्ञान के साहित्य का सृजन और उत्पादन का होना भी इन सम्बन्धों में पारदर्शिता और परस्पर विश्वास की कमी है। आप प्रबुद्ध हैं। इस पक्ष पर भी लिखें। हिन्दी की बिंदी नहीं, चिंदी लहरा रही है—संविधान तथा समय के आदेशों के बावजूद क्यों? इसलिए कि (1) हिन्दी उच्चतर ज्ञान एवं शिक्षा का माध्यम नहीं है, (2) अभिजनों के समूहों तथा वर्गों के बीच हिन्दी हेय है तथा (3) उच्चस्तरीय ज्ञान, समाजवैज्ञानिक ज्ञान हिन्दी में नहीं आ पा रहा है। इससे वह स्वतंत्रता आन्दोलन से विच्छिन्न होते-होते खरीद और अनुदानों की लूट के घेरों में चीरहरण करा रही है। हिन्दी द्रौपदी के दैत्य पति हैं जो देवताओं के मुखौटे लगा चुके हैं। आज हिन्दी किस्सों-कहानियों, उपन्यासों-कविताओं की पसारी तथा मनियारी की दुकान बन गई है। वह कब राजभवनों, जन-स्कूलों, उच्च शिक्षा संस्थानों तथा टैकनालॉजिकल क्षेत्रों में भी हक पाएगी? कैसे?

—**रमेश कुंतल मेघ,** पंचकुला

सम्पादकीय में 'ज्ञान का उद्योग, उद्योग का ज्ञान' शीर्षक से जो लिखा है वह इतना सामयिक और ज्वलंत प्रश्न है, आश्चर्य है बड़े-बड़े समाचार पत्र तथा बुद्धिजीवी विचारक इस पर ध्यान क्यों नहीं देते? अपनी प्रतिभा को न हम आँकते हैं, न अवसर देते हैं। विदेशी इस प्रतिभा में निवेश कर अपनी पूँजी बना रहे हैं। यह पूँजी उनके उद्योगों को शिखर तक पहुँचाने में सोपान बन रही है। हमारे लिए ज्ञान की यह पूँजी अपने ही देश में भटकन, हताशा, निराशा तथा बेरोजगारी का शिकार हो रही है। इस विडम्बना को क्या कहा जाय?

—**अमरनाथ शुक्ल,** दिल्ली

इन दिनों हिन्दी के समाचारपत्रों में 'भाषा' की जो दुर्दशा हो रही है उसके लिए क्या कुछ भी नहीं किया जा सकता? सब कुछ जानते-समझते भी सरेआम भाषा की उपेक्षा का यह क्रूर नज़ारा हम देखने को अभिशप्त है। —**डॉ० सूर्यबाला,** मुम्बई

साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों वाली ऐसी उपयोगी मासिक पत्रिका की जानकारी मुझे नहीं थी। मेरी राय में अधिक से अधिक लोगों को इसकी जानकारी होनी चाहिए।

पुस्तकों की महत्ता पर आप भावपूर्ण कविताएँ भी दे देते हैं और तर्कपूर्ण-विचारपूर्ण लेख भी दे देते हैं यह बहुत अच्छी बात है। कोई नहीं करता यह काम।

पुस्तकों की समीक्षाएँ, परिचय और चर्चाएँ देना भी उपयोगी है। यत्र-तन्त्र-सर्वत्र, सम्मान-उपहार, स्मृति-शेष, संगोष्ठी-लोकार्पण तथा पुस्तक-समीक्षा और कथन स्तम्भ बहुत अच्छे हैं। समाचार-विचार सभी मिल जाते हैं। कथन स्तम्भ में उद्धृत विचारों का सन्दर्भ भी देते रहें तो और अच्छा रहे।

सम्पादकीय लेख विद्वत्तापूर्ण भी हैं और संस्मरणात्मक होने के कारण साहित्यप्रेमियों के लिए खूब रोचक हैं।

मार्च अंक में मुझे कांतिकुमार का 'लोकप्रियता नहीं पाठकप्रियता' लेख बहुत पसन्द आया। —**शिवरतन थानवी,** जोधपुर

'भारतीय वाङ्मय' को पढ़ना व प्रकाशित होना, भारतीय साहित्य में एक ज्ञानप्रद सुखद अनुभव होता है। पत्रिका हिन्दी साहित्य में मील का पत्थर प्रतीत होती है। साहित्य की दिशा और दशा का जीवंत दस्तावेज है। छोटे किन्तु सुघड़ आकार में वो सब कुछ समाहित होता है, जिसे होना चाहिए।

अपनी भाषा और साहित्य के बोध से ओत-प्रोत पत्रिका हर दृष्टि से प्रभावित करती है।

—**शब्बन खान 'गुल',** बहराइच

'भारतीय वाङ्मय' के अप्रैल, 2007 अंक में सम्पादकीय के माध्यम से वर्तमान शिक्षा और शिक्षण संस्थानों की स्थिति पर चिन्ता बिल्कुल जायज़ है। सचमुच, आज के दौर में, जब सब कुछ 'बाज़ार' में तब्दील हो रहा है, 'ज्ञान' भी एक महँगे उद्योग का रूप ले चुका है।

'कितने पाकिस्तान' के बहाने डॉ० बच्चन सिंह द्वारा वरेण्य साहित्यकार कमलेश्वरजी को दी गई श्रद्धांजलि, राष्ट्रकवि सोहनलाल द्विवेदी, आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र की जन्मशती पर उनका संस्मरण इस अंक को विशिष्ट बनाते हैं।

—**जय चक्रवर्ती,** रायबरेली

'भारतीय वाङ्मय' विशुद्ध साहित्यिक गतिविधियों व हलचल से परिचित करवाती है। आपके संस्मरण रोचक तथा जानकारी लिए होते हैं—'आँसू की कहानी में जो घनीभूत पीड़ा थी' उसका सन्दर्भ मेरे लिए तो क्या बहुत लोगों के लिए नया है। —**नथमल केडिया,** कोलकाता

हाइकु

तलाश रहीं
पुस्तकें, चले गए
कहाँ पाठक?

आलमारी में
बेचैन हैं पुस्तकें
बिना ग्राहक।

इण्टरनेट
अंधसागर, डुबो
रहा साहित्य।

टूटेगा मौन
फिर खालेंगी पन्ने
यही पुस्तकें

—**नलिनीकान्त,** अंडाल (प० बंगाल)

संगोष्ठी/लोकार्पण

महादेवी वर्मा जन्मशती

उद्घाटन करते आर०पी० पटेल

साहित्य अकादमी, नई दिल्ली तथा नलिनी अरविन्द एण्ड टी०वी० पटेल आर्ट्स कॉलेज, वल्लभ विद्यानगर के संयुक्त तत्त्वावधान में 25-26 मार्च 2007 को महादेवी वर्मा जन्मशती के अवसर पर द्विदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन हुआ। उद्घाटन श्री आचार्य आर०पी० पटेल ने किया।

बाएँ से डॉ० बी०एम० झाला, डॉ० के० एफ० पटेल, प्राचार्य डॉ० एन०आर० परमार, प्रो० रंजना अरगड़े तथा डॉ० शिवप्रसाद शुक्ल

संगोष्ठी में विभिन्न विद्वानों ने महादेवी वर्मा साहित्य के विविध पक्षों तथा समकालीन नारी विमर्श पर आलेख प्रस्तुत किये। संगोष्ठी में डॉ० बी०एम० झाला, आचार्य डॉ० एन०आर० परमार, प्रो० विष्णु विराट चतुर्वेदी, डॉ० शिवप्रसाद शुक्ल, डॉ० गिरीश त्रिवेदी, प्रो० रंजना अरगड़े, डॉ० के० एफ० पटेल आदि विद्वानों ने भाग लिया।

चोरों का भी पुराण

भारतीय समाज राजनीति से लेकर अर्थनीति एवं सामाजिक मूल्यों तक फैला भ्रष्टाचार ऐसा सर्वग्रासी हो गया है कि इन दिनों चोरों का भी पुराण लिखा जा रहा है। ऐसा ही एक पुराण है हिन्दी के जाने-माने युवा कवि विमल कुमार की पेंगुइन इण्डिया से हाल ही में प्रकाशित पुस्तक चोर पुराण। जिसका प्रमुख साहित्य समीक्षक एवं जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के डॉ० मैनेजर पाण्डेय ने लोकार्पण किया।

विश्व पुस्तक दिवस

अभिनव प्रकाशन, अजमेर द्वारा विश्व पुस्तक दिवस पर 'राजस्थानी इतिहास एवं संस्कृति के स्रोत' विषय पर संगोष्ठी का उद्घाटन वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० सी०पी० देवल ने किया। उन्होंने पाठकों की घटती संख्या पर चिन्ता जताई और कहा कि पुस्तकों के पढ़ने से चिंतन, मनन व ध्यान को विकसित करने का अवसर मिलता है वह इण्टरनेट के बढ़ते प्रभाव से कम होता जा रहा है। अध्यक्षता करते हुए डॉ० रामगोपाल गोयल ने कहा कि पुस्तकें हमारा ज्ञानार्जन करती हैं। हमें साहित्य, संस्कृति और इतिहास की जानकारी देती हैं। पुस्तकें व्यक्ति की सबसे अच्छी मित्र सिद्ध हो सकती हैं, बशर्ते हम उनका अच्छा और अधिकाधिक प्रयोग करें। इस अवसर पर तीन दिवसीय पुस्तक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया एवं वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० सी०पी० देवल ने लेखिका लक्ष्मीदास की पुस्तक 'स्पन्दन' डॉ० प्रताप पिंजानी की पुस्तक 'तीर्थराज पुष्कर' एवं संजय गुप्ता की पुस्तक 'राजस्थान सामान्य ज्ञान' का लोकार्पण किया।

नरेन्द्र मोहन का नाटक 'अलात-चक्र' एक नया रंग-प्रयोग

बायें से दायें : नाट्य पाठ करते हुए डॉ० नरेन्द्र मोहन, रंगकर्मी राजेश भारद्वाज और प्रमोद पब्बी

भारतीय कला एवं संस्कृति को समर्पित संस्था 'प्रेरणा' (अम्बाला) ने वर्ल्ड थियेटर के अवसर पर प्रसिद्ध नाटककार एवं कवि नरेन्द्र मोहन अपने नए नाटक 'अलात-चक्र' के वाचन के अवसर पर नाटक के सामने खड़ी चुनौतियों का जिक्र करते हुए कहा कि आज मनुष्य के सामने जो संकट खड़े हैं, उनका मुकाबला रंगमंच के साथ गहरे जुड़ाव और सरोकार से सम्भव है। यह वक्त है कि रंगमंचीय गतिविधियाँ तेजी से बढ़ें। रंगमंच हमें उबार सकता है मगर इस दिशा में हमें सक्रिय होना होगा।

आयोजन की अध्यक्षता कर रहे पंजाबी के सुपरिचित साहित्यकार डॉ० रतन सिंह ढिल्लो ने कहा कि अंधेर नगरी लोक-कथा को पृष्ठभूमि में रखते हुए इस नाटक में आज की दारुण परिस्थिति को बड़े प्रतीकात्मक रूप में उभारा गया है। सत्ता और व्यवस्था की ज्यादती के कारण उत्पन्न हुई त्रासदी के बावजूद संघर्ष जारी रखने की भावना इस रचना की खूबसूरती है। प्रख्यात रंगकर्मी राजेश भारद्वाज ने कहा कि नाटक प्रतीकों और बिम्बों के माध्यम से विषय की सार्थकता को व्यक्त करने में सफल रहा हे। रंगकर्मी प्रमोद पब्बी ने कहा कि यह नाटक एक नया रंग प्रयोग है। यहाँ नाटक में नाटक है, खेल में खेल है और अन्ततः यह नाटक कलाकारों और आम आदमी के संधर्ष के प्रतीक के रूप में बड़े सशक्त ढंग से उभरता है। सुपरिचित अभिनेत्री कमलेश शर्मा ने कहा कि नाटक के अन्त में संघर्ष जारी रखने का रंग-संकेत ओर उसका नाटकीय संयोजन बड़ा सटीक और मार्मिक है।

अभिनव भरत पं० सीताराम चतुर्वेदी जन्मशताब्दी

अभिनव भरत आचार्य सीताराम चतुर्वेदी की जन्मशताब्दी के अवसर पर आगा हश्र कश्मीरी को याद किया गया। वाराणसी की सांस्कृतिक संस्थाओं 'सेतु' और 'बाल रंगमण्डल' की ओर से तीन से तेरह अप्रैल 2007 तक नाट्य आन्दोलन के तहत विभिन्न नाट्य सम्बन्धी आयोजन किये गये जिनमें दो नाट्य गोष्ठियाँ प्रमुख थीं। पहली गोष्ठी पारसी रंगमंच के स्थानीय युगपुरुष आगाहश्र कश्मीरी के नारियल बाजार स्थित आवास पर 4 अप्रैल को आयोजित हुई। आगा जमील कश्मीरी के पुत्र एवं आगा हश्र एकेडमी के सचिव आगा निहाल कश्मीरी ने 'आगा हश्र के नाटकों की सामाजिक चेतना' विषय का प्रवर्तन किया। आरम्भ में अभिनव गुप्त एकेडमी के निदेशक गौतम चटर्जी ने कहा कि चूँकि आगा हश्र के नाटक सही मायने में हिन्दी में प्राप्त नहीं हैं और बनारस में मंचित उनके नाटक 'यहूदी की लड़की' को सिर्फ देखकर उन पर चर्चा करना अनुपयुक्त है इसलिए ऐसे विद्वानों को ही सुना जाना चाहिए जिन्होंने उन पर गम्भीरता से काम किया और जो इस गोष्ठी में उपस्थित हैं। राजघाट स्थित मुक्तकाशी मंच पर 'स्त्री प्रेक्षा' की ओर से 'यहूदी की लड़की' का रंगनिर्देशन एवं इसमें अभिनय कर चुकीं वरिष्ठ रंगकर्मी डॉ० इरावतीने कहा कि आगा हश्र साहब अपने वक्त की संवेदना को बखूबी पहचानते थे तभी उन्होंने ऐसे नाटक लिखे और खेले जो तत्कालीन सामाजिक चेतना पर प्रश्न ही नहीं करते बल्कि चेतना को बदलने की कोशिश भी करते हैं। वरिष्ठ संस्कृतिकर्मी पं० धर्मशील चतुर्वेदी ने कहा कि नाटक साहित्य का उपादान नहीं, रंगमंच पर मंचस्थ करने का प्रायोगिक प्रमाण है और इसी दृष्टि से आगा हश्र युगपुरुष थे। वरिष्ठ रंगकर्मी कुँवरजी अग्रवाल ने चर्चा की कि इस गोष्ठी में आने से पहले जब वे राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय से प्रकाशित आगा हश्र समग्र को पलट रहे थे तो उन नाटकों में उन्होंने पाया कि उस वक्त और इस वक्त में कितना कुछ बदलाव आ गया है, कि पहले का थियेटर सिर्फ नाच-गाने का थियेटर था। इस पर अध्यक्षता कर रहे बीएचयू, उर्दू विभाग के पूर्व अध्यक्ष प्रो०

हनीफ नकवी ने सभी को जानकारी दी कि रानावि द्वारा प्रकाशित समस्त नाटक वे ही हैं जो अर्से से बाजार में उपलब्ध हैं, जो वास्तविक नाटक हैं ही नहीं। आगा हश्र ने अपने जीते जी अपने नाटक प्रकाशित कराये ही नहीं, दो-एक की दो-दो प्रतियाँ छोड़। मंचित नाटकों को देखकर जो संवाद लिखे व अपनी ओर से जोड़े गये उन्हें ही छाप कर बाजार में बेचा गया। आगा हश्र के वास्तविक नाटकों पर तो काम अब हुआ है उर्दू में। उनके सारे नाटकों पर काम कर और उन्हें सम्पादित कर उर्दू के विद्वान डॉ० याकूब यावर ने प्रकाशित कराया जो दिल्ली से छपी है।

यह नाट्यान्दोलन चूँकि आचार्य सीताराम चतुर्वेदी के जन्मशती वर्ष को समर्पित था, इसलिए दूसरी गोष्ठी 5 अप्रैल को उन्हीं के आवास 'वेद भवन' में आयोजित हुई। इसकी अध्यक्षता करते हुए कुँवरजी अग्रवाल ने कहा कि उनके लिखे सभी नाटक पहले मंचस्थ हुए, फिर प्रकाशित हुए। इस अवसर पर डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र, डॉ० छविनाथ पाण्डेय, जमशेदपुर से आये नाट्यकर्मी मो० निजाम आदि ने भी अपने विचार रखे।

जनकवि केदारनाथ अग्रवाल का जन्मदिन

पहली अप्रैल 2007 को 'केदार शोध पीठ न्यास', बाँदा में जनकवि केदारनाथ अग्रवाल के 97वें जन्मदिन के उपलक्ष्य में एक वृहद् संगोष्ठी का आयोजन हुआ।

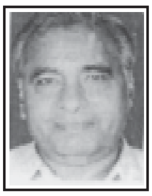

संगोष्ठी में डॉ० अश्विनी कुमार शुक्ल, डॉ० देवलाल मौर्य, श्रीमती शान्ति खरे, डॉ० रामगोपाल गुप्त, चन्द्रपाल कश्यप, श्री योगेश श्रीवास्तव, ने भाग लिया।

पीठ न्यास के सचिव श्री नरेन्द्र पुण्डरीक ने कहा 1947 में देश को आजादी मिली। केदारनाथ अग्रवाल ने 1948 में कविता लिखी ''यहाँ हमारी जन्मभूमि में यदि आयेगा डालर / वह अपने साम्राज्यवाद को घोर नशे में / भारतीय पूँजीपतियों से साँठ-गाँठ कर / क्रय दिल्ली की राजनीति को कर लेगा।'' अध्यक्षता करते हुए सागर विश्वविद्यालय के भाषाविद् डॉ० भगवानदीन मिश्र ने कहा केदारनाथ अग्रवाल ने इस कठोर धरातल वाली धरती का सौन्दर्य कविताओं में इस तरह से उकेरा है कि केदारजी की प्रकृति सौन्दर्य की कवितायें हिन्दी कविता में कालिदास एवं वाल्मीकि की तरह बाधक बन कर खड़ी हैं।

ब्रज लोक काव्य

लोक साहित्य समस्त साहित्यिक उपलब्धियों का मूल है। इसका संरक्षण, संवर्धन एवं अन्वेषण सांस्कृतिक महत्त्व की दृष्टि से अति अनिवार्य है। इस दिशा में डॉ० पाल का शोध ग्रन्थ लोक साहित्य के नये आयाम खोलता है। ये विचार पूर्व राज्यपाल एवं केन्द्रीय मंत्री डॉ० भीष्मनारायण सिंह ने सुपरिचित साहित्यकार डॉ० हरिसिंह पाल के शोध ग्रन्थ 'ब्रज लोक काव्य : सामाजिक सन्दर्भ' पर भारतीय विद्या भवन सभागार, दिल्ली में आयोजित चर्चा गोष्ठी में व्यक्त किये। ब्रज संस्कृति एवं विकास संस्थान द्वारा आयोजित इस चर्चा गोष्ठी में पूर्व केन्द्रीय मंत्री प्रोफेसर देवेन्द्रप्रसाद यादव, पद्मश्री डॉ० श्याम सिंह शशि, वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० बलदेव वंशी, हिन्दी एकाडमी के पूर्व सचिव डॉ० रामशरण गौड़, पूर्व निदेशक डॉ० सोमदत्त दीक्षित, वरिष्ठ समालोचक डॉ० जयनारायण कौशिक, भाषाविद् डॉ० पूरनचन्द टण्डन ने डॉ० पाल के इस शोध ग्रन्थ की विवेचना करते हुए इस महत्त्वपूर्ण कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की। समारोह में डॉ० कैलाशचन्द भाटिया, डॉ० जयपाल तरंग, डॉ० राजेन्द्र रंजन चतुर्वेदी, डॉ० नजीर मो०, डॉ० सरोजिनी कुलश्रेष्ठ आदि ने भाग लिया।

भाषाविद रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव एक पुनरावलोकन

दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा शोध संस्थान, हैदराबाद के अन्तर्गत भाषाविद रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के सन्दर्भ में 31 मार्च और 1 अप्रैल 2007 को दो द्विवसीय संगोष्ठी का आयोजन हुआ। संस्थान के कुलपति श्री सी०सी० रेड्डी ने उद्घाटन करते हुए कहा—राष्ट्रभाषा राष्ट्रीयता का प्रतीक है, इसे हमें अनिवार्य रूप से अंगीकार करना चाहिए।

तेलुगू विश्वविद्यालय भाषा विकास विभाग के पूर्व निदेशक प्रो० रामकृष्ण रेड्डी ने आह्वान किया कि श्रीवास्तव से प्रेरणा लेकर आदिवासी भाषाओं पर अनुसन्धान करके अशिक्षा दूर करने के लिए पाठ्य-पुस्तकें तैयार करनी चाहिए। मुख्य अतिथि आन्ध्र सभा के अध्यक्ष कोम्मा शिवशंकर रेड्डी ने कहा—श्रीवास्तव उन विरले विद्वानों में से हैं जिन्होंने भाषा विज्ञान और साहित्य चिन्तन को एक साथ साधकर दिखाया है।

संगोष्ठी संरक्षक प्रो० दिलीप सिंह ने कहा कि प्रो० श्रीवास्तव ने यह प्रतिपादित किया था कि भाषा हमारे अस्तित्व और आस्था का आधार है, अत: उसकी उपेक्षा अत्यन्त चिन्ताजनक है। इस अवसर पर संस्थान के कुलसचिव श्री दिलीप सिंह द्वारा सम्पादित डॉ० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव के अब तक अप्रकाशित कविताओं के संकलन **अचानक की एक मुलाकात** का लोकार्पण सी०सी० रेड्डी ने किया।

प्रसाद के काव्यों में अन्योक्ति सिद्धान्त

विश्वभारती अनुसन्धान परिषद्, ज्ञानपुर द्वारा आयोजित समारोह में वरिष्ठ साहित्यकार डॉ० शुकदेव सिंह ने डॉ० सविता द्विवेदी के ग्रन्थ 'प्रसाद के काव्यों में वक्रोक्ति-सिद्धान्त' का आलोकार्पण किया। आपने कहा कि मैं लोकार्पण नहीं आलोकार्पण करता हूँ। आपने कहा कि यह काव्यशास्त्र की पहली पुस्तक है जो भाषातंत्र के प्रत्येक पक्ष का विवेचन करती है। इस ग्रन्थ में वक्रोक्ति सिद्धान्त का विस्तृत विवेचन हुआ है तथा प्रायोगिक रूप में प्रसाद के काव्यों से उद्धरण दिए गए हैं। यह ग्रन्थ अपने विषय का समृद्ध ग्रन्थ है तथा काव्यशास्त्रीय दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए पद्मश्री डॉ० कपिलदेव द्विवेदी ने कहा कि वक्रोक्ति जैसे विषय पर लिखा गया यह ग्रन्थ अपने विषय पर स्पष्ट और विशद प्रकाश डालता है। कार्यक्रम में विशिष्ट अतिथि प्रो० विद्याशंकर त्रिपाठी ने काव्यशास्त्र के विभिन्न सम्प्रदायों पर प्रकाश डालते हुए वक्रोक्ति का विवेचन किया। लेखिका डॉ० सविता द्विवेदी ने ग्रन्थ का परिचय प्रस्तुत किया। कार्यक्रम संचालन कवयित्री डॉ० सविता भारद्वाज ने तथा धन्यवाद ज्ञापन डॉ० भारतेन्दु द्विवेदी ने किया।

आंतरिक हिन्दी वैज्ञानिक संगोष्ठी-16 का आयोजन

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान देहरादून द्वारा आयोजित आंतरिक हिन्दी वैज्ञानिक संगोष्ठी का उद्घाटन संस्थान के निदेशक डॉ० एम०ओ० गर्ग ने किया। संचालन संस्थान के वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी डॉ० दिनेश चमोला ने किया।

संगोष्ठी में संस्थान के वैज्ञानिकों यथा—श्री मृत्युंजय कुमार शुक्ल ने 'डाइमिथाइल ईथर : स्वच्छ वैकल्पिक ईधन' के अन्तर्गत इसकी पृष्ठभूमि, डीएमई का भविष्य, पर्यावरण, स्वास्थ्य एवं संरक्षात्मक दृष्टिकोण आदि; कु० रेखा चौहान ने 'गैसोलीन का अपमिश्रण'; विषय पर गैसोलीन में अपमिश्रण, प्रकार, प्रभाव तकनीक; डॉ० एन० विश्वनाधम ने 'एफसीसी गैसोलीन का मान श्रेण्योन्नयन' विषय पर विनिर्देश, समावयवीकरण, सीपीसीएल गैसोलीन, फीड का संघटन आदि; कु० पूजा यादव ने 'पादप जैव-प्रौद्योगिकी' पर परम्परागत जैव-प्रौद्योगिकी, आधुनिक जैव-प्रौद्योगिकी, गुण-दोष आदि; डॉ० मनोज कुमार ने 'पेट्रोलियम परिष्करण उद्योग में उत्प्रेरक' तथा डॉ० लालजी दीक्षित ने 'गैसोलीन की रचना एवं उसको बनाने की विधियाँ' विषय पर क्रमश: शोध-पत्रों की प्रस्तुतियाँ हिन्दी में दीं।

प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन नागपुर, दूसरा मारीशस तथा तीसरा नई दिल्ली में हुआ था।

■ ■ ■

पश्चिमी देशों में लन्दन विश्वविद्यालय का 'स्कूल ऑफ ओरियंटल एण्ड अफ्रीकल स्टडीज़' सबसे प्राचीन संस्था है जिसमें हिन्दी पढ़ाने की व्यवस्था है।

■ ■ ■

फ्रांस दूसरा बड़ा देश है, जहाँ हिन्दी एक विषय के रूप मे पढ़ायी जाती है।

कथन

दक्षिण भारत में हिन्दी का विरोध नहीं

''दक्षिण भारत में राजभाषा हिन्दी के प्रति लोगों का रुझान बढ़ा है। लाखों की संख्या में छात्र हिन्दी पढ़ रहे हैं। हिन्दी माध्यम में मेडिकल कॉलेजों में भी शिक्षा दी जा रही है। दक्षिण भारत में 10 हजार से अधिक हिन्दी प्रचारक दिन रात हिन्दी के प्रचार में लगे हैं। पहले लोग खेती-बारी व लोकल व्यापार तक सीमित थे। युवा वर्ग नौकरी की तलाश में बाहर निकला तो धारणा में भी बदलाव आया।'' दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास के कोषाध्यक्ष व प्रबन्ध निधि पाल एस पार्थसारथी कहते हैं। अब दक्षिण में वोट के लिए हिन्दी का विरोध नहीं होता। कह सकते हैं कि लोगों में मनबदलाव आया है। लोग हिन्दी को धड़ल्ले से कनेक्टिंग भाषा के रूप में अपना रहे हैं। आन्ध्रा निवासी व सभा में विभिन्न परिषदों के सदस्य के पी मानेश्वर राव कहते हैं कि हिन्दी की दुर्दशा के लिए निर्विवाद रूप से नेता जिम्मेदार हैं। हिन्दी के जरिये प्रान्तीय भाषाओं का विकास ही हुआ है। केरल निवासी व सभा मुख्यालय मद्रास में शिक्षा सचिव राधाकृष्णन कहते हैं अब हमारे यहाँ त्रिभाषा पद्धति है जिसमें हिन्दी, अंग्रेजी व मलयालम शामिल है। 5वीं से 10वीं कक्षा तक हिन्दी अनिवार्य विषय है।

सांसदों के लिए हिन्दी प्रशिक्षण कार्यक्रम

अहिन्दीभाषी संसद सदस्यों के लिए 26 अप्रैल से 22 मई 2007 तक हिन्दी प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किया गया। इसमें केरल, तमिलनाडु, कर्नाटक और आन्ध्र प्रदेश जैसे सुदूर दक्षिणी राज्यों से लेकर पूर्वोत्तर राज्यों पश्चिम बंगाल और उड़ीसा तक के 35 साल से 70-72 साल के गैर हिन्दीभाषी बुजुर्ग सांसद शामिल हुए। हिन्दी प्रशिक्षण कार्यक्रम बीएचयू के भूतपूर्व प्राध्यापक विश्वनाथ मिश्र तथा उनके पुत्र संयम मिश्र द्वारा संचालित किया गया।

आजादी के पहले की पत्रकारिता एक मिशन थी, अब यह कमीशन है। **—डॉ० प्रभाकर माचवे**

हिन्दी साहित्य के अध्येताओं के लिए महत्त्वपूर्ण पुस्तकें

साहित्य शास्त्र

डॉ० भगीरथ मिश्र
काव्यशास्त्र सजि. 180.00, अजि. 100.00
नया काव्यशास्त्र सजि. 80.00
काव्यरस : चिन्तन और आस्वाद सजि. 50.00
पाश्चात्य काव्यशास्त्र : इतिहास सिद्धान्त और वाद सजि. 150.00 अजि. 70.00

डॉ० अर्चना श्रीवास्तव
भारतीय तथा पाश्चात्य काव्यशास्त्र अजि. 65.00

डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी
भारतीय काव्यशास्त्र की आचार्य परम्परा सजि. 120.00

नगीनदास पारेख तथा डॉ० प्रेमस्वरूप गुप्त
अभिनव का रस-विवेचन सजि. 100.00

डॉ० रामलखन शुक्ल
शब्द-शक्ति-विवेचन सजि. 40.00

डॉ० रवीन्द्रसहाय वर्मा
पाश्चात्य साहित्यालोचन और हिन्दी पर उसका प्रभाव सजि. 40.00

डॉ० रेवाप्रसाद द्विवेदी
संस्कृत काव्यशास्त्र का आलोचनात्मक इतिहास अजि. 500.00

डॉ० दशरथ द्विवेदी
रसाभिव्यक्ति सजि. 150.00

आलोचक तथा आलोचना

डॉ० रामचन्द्र तिवारी
आधुनिक हिन्दी आलोचना : संदर्भ एवं दृष्टि सजि. 150.00
आलोचक का दायित्व सजि. 250.00, अजि. 150.00
कृति चिन्तन और मूल्यांकन सन्दर्भ सजि. 200.00

डॉ० राजीव सिंह
प्रगतिशील आलोचना की परम्परा और डॉ० रामविलास शर्मा सजि. 140.00

डॉ० रामबहादुर राय
हिन्दी आलोचना और आचार्य विश्वनाथप्रसाद मिश्र सजि. 100.00

गद्य साहित्य समीक्षा

डॉ० रामचन्द्र तिवारी
हिन्दी का गद्य साहित्य सजि. 625.00 अजि. 440.00
हिन्दी उपन्यास सजि. 160.00, अजि. 100.00
हिन्दी निबंध और निबंधकार अजि. 150.00
हिन्दी गद्य प्रकृति और रचना संदर्भ सजि. 200.00, अजि. 120.00
आधुनिक हिन्दी साहित्य : विविध आयाम शीघ्र प्रकाशित

डॉ० उर्मिला मिश्र
आधुनिकता और मोहन राकेश सजि. 80.00

डॉ० गुप्तेश्वरनाथ उपाध्याय
राहुल सांकृत्यायन के गद्य-साहित्य का शैलीगत अध्ययन सजि. 60.00

डॉ० रागिनी वर्मा
फणीश्वरनाथ रेणु और उनका कथा साहित्य सजि. 320.00

डॉ० शशिकला त्रिपाठी
उत्तरशती के उपन्यासों में स्त्री सजि. 120.00

डॉ० सुधांशु शुक्ल
फणीश्वरनाथ रेणु की कहानियों में सामाजिक यथार्थ सजि. 80.00

डॉ० मदालसा व्यास
हिन्दी व्यंग्य साहित्य और हरिशंकर परसाई सजि. 200.00

डॉ० आनन्दकुमार पाण्डेय
वैतरणी से वैश्वानर की यात्रा सजि. 190.00
(सन्दर्भ : शिवप्रसाद सिंह के उपन्यास)

मान्धाता राय
विवेकी राय और उनका सृजन संसार सजि. 150.00

डॉ० श्रुति मुखर्जी
निबन्धकार पं० विद्यानिवास मिश्र सजि. 50.00

डॉ० श्यामसुन्दर घोष
नवलेखन : समस्याएँ और सन्दर्भ सजि. 60.00

डॉ० रामकली सर्राफ
नयी कहानी : परिवेश और परिप्रेक्ष्य सजि. 25.00

डॉ० आशाकुमारी
बिहार का संस्मरण साहित्य सजि. 60.00

डॉ० सुमन जैन
आचार्य विनोबा की साहित्य दृष्टि सजि. 250.00

डॉ० सदानन्दप्रसाद गुप्त
हिन्दी साहित्य विविध परिदृश्य सजि. 160.00

ज्वालाप्रसाद खेतान
सृजन के आयाम सजि. 80.00

विश्वविद्यालय प्रकाशन
चौक, वाराणसी

स्मृति-शेष

श्री कन्हैयालाल मलिक का स्वर्गवास

हिन्दी प्रकाशन जगत के शलाका पुरुष **श्री कन्हैयालाल मलिक** का 5 अप्रैल 2003 को दिल्ली में स्वर्गवास हो गया। 12 सितम्बर 1912 को चक झावरा, जिला शेखपुरा (पंजाब) में मलिकजी का जन्म हुआ। 1945 में दिल्ली में 'नेशनल पब्लिशिंग हाउस' के नाम से प्रकाशन प्रारम्भ किया। हिन्दी प्रकाशन को नया आयाम देते हुए प्रतिष्ठा प्रदान की। मलिकजी 'अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ' के अध्यक्ष रहे। उनकी कर्मठता और जुझारूपन ने हिन्दी प्रकाशन को प्रतिष्ठा प्रदान की। सन् 2006 में केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा ने हिन्दी प्रकाशन को अपूर्व योगदान हेतु उन्हें सम्मानित किया। 'भारतीय वाङ्मय' तथा विश्वविद्यालय प्रकाशन परिवार दिवंगत आत्मा के प्रति विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता है।

वंदे मातरम्

—हजारीप्रसाद द्विवेदी

बंगदर्शन पत्रिका की 1381 फसली सन के कार्तिक अंक में बंकिम बाबू ने 'मेरा दुर्गोत्सव' नाम का एक लेख लिखा है, उससे 'वंदे मातरम्' के मूल भाव विद्यमान हैं। कहते हैं कि पूर्वी बंगाल में जब संन्यासी विद्रोह हुआ था, तो संन्यासी लोग माता दुर्गा के इसी स्तोत्र का पाठ करके अपने-अपने कार्यक्षेत्र में जाते थे। अपने 'आनन्दमठ' में बंकिम बाबू ने माँ दुर्गा को एक नए रूप में देखा था। वहाँ वह भारत माता के रूप में अवतरित हुई थीं। कहते हैं आज से सौ वर्ष पहले दुर्गापूजा के अवसर पर बंकिम बाबू ने यह गान लिखा था, जो आगे चलकर भारतीय स्वाधीनता के सिपाहियों का मंत्र बन गया। ऐसा सुनने में आता है कि पूजा के दिन बंकिम बाबू देवी की प्रतिमा का दर्शन करने के बाद एकदम अभिभूत हो गए थे। निश्चित और विश्वसनीय विवरण तो नहीं मिला, परन्तु ऐसा मान लेने के उचित कारण हैं कि उस दिन सचमुच ही बंकिम बाबू पर माता के स्नेह की अमित वर्षा हुई थी और उसी का परिणाम था कि वे इस महान मंत्र को इतनी स्पष्ट और शक्तिशाली भाषा में निबद्ध कर सके और यह स्तोत्र मंत्र अनेक दशकों तक भारतवर्ष के युवकों में अद्भुत प्रेरणा ओर उत्साह का संचार करता रहा। वन्दे मातरम् का उच्चारण करते हुए हजारों महाप्राण युवक कठिन से कठिन यातनाओं को अनायास पार कर गए। कितने ही फाँसी के तख्ते पर झूल गए, कितने ही दीर्घकाल तक हथकड़ी-बेड़ी में जकड़े हुए भी माता के आशीर्वाद से सदा प्रफुल्ल बने रहे। इस गान ने देश के सोचने-समझने वाले नवयुवकों को एकदम झकझोर दिया। माता की दुर्दशा वस्तुत: पुत्रों की कमजोरी के कारण है। एक बार वह कमजोरी हटा दी जाए तो इतनी शक्तिशाली माता संसार में कोई हो ही नहीं सकती। इस गान की यही बड़ी शक्ति है। उसने सोते हुओं को जगाया, जगे हुए को खड़ा होने का बल दिया। देखते-देखते सारा देश विदेशियों के विरुद्ध कमर कस कर खड़ा हो गया और गान लिखे जाने के 70 वर्ष बाद पूर्ण रूप से स्वाधीन हो गया। 'वंदे मातरम्' विश्वास को प्रेरणा देता है। देश-माता के सुजला, सुफला रूप का गान करता है। माता के अजस्र बलशालिनी होने का विश्वास दृढ़ करता है और मातृभूमि के उपासकों में यह आस्था संचरित करता है कि वे अजेय हैं। स्वतंत्रता-संग्राम के समय इस मंत्र ने विदेशी आक्रामकों से जूझने की प्रेरणा दी थी, लेकिन विदेशी शासन समाप्त हो गया है तब भी इसकी उपादेयता बढ़ी हुई है। हमें आज भी इस मंत्र की आवश्यकता है। आज हमें स्वतंत्रता की लड़ाई से भी अधिक दृढ़ता के साथ गरीबी, अशिक्षा और कुसंस्कारों से लड़ना है। यह लड़ाई बड़ी विकट है। कई बार अपने देश के ही नाना लोग बाधा पहुँचाने आ जाते हैं, परन्तु हमें धैर्य नहीं खोना है। 'वंदे मातरम्' आज भी हमें दृढ़ संकल्प के साथ नई समस्याओं से जूझने का बल देता है। आज भी हमें शिथिल अवसन्न होने की आवश्यकता नहीं है। 'वंदे मातरम्' हमें निरन्तर आसुरी वृत्तियों से संघर्ष करने का संकल्प देता है। मेरा तो ऐसा विश्वास है कि जब कभी हमारे जीवन में अवसाद या शिथिलता आएगी, तभी 'वंदे मातरम्' हमारे भीतर नई शक्ति पैदा करता रहेगा।

किताबें! किताबें!

2006 में सूरत (गुजरात) में भीषण बाढ़ आई, पशु-पक्षी, जान-माल सब जल में तैरता चला, इमारतें ध्वस्त। मौत का मातम भी कौन मनाये; अश्रु तक लापता। घर-घर, जन-जन ने क्या नहीं गँवाया।

क्या ऐसे में पुस्तक मेला लगेगा?

सेवासदन महानगरपालिका ने मेला लगाया। बड़े प्रकाशक विक्रेता अड़ गये और नहीं आये।

खैर, हम चल पड़े, मेला आखिर मेला, लोग आयेंगे, किताब देखेंगे, सम्पर्क बनेगा।

पुस्तक मेला, यानी संस्कारों का मेला। पुस्तकों में कितनी सम्पदा-संस्कृति, सभ्यता, शिल्प, स्थापत्य, विभिन्न कलाएँ, प्रकृति दर्शन।

आखिर पुस्तक मेला लगा, मन-मस्त पाठक आये।

आश्चर्य, बाढ़ तो क्या, पाठकों की बहार आ गई—

अरे यहाँ तक कि आत्मकथा गांधी, आश्रम भजनावली, कथा-वार्ता मुंशी प्रेमचंद, बच्चन की मधुशाला, अमृता प्रीतम की जीवनी, कहानियाँ, स्वामी विवेकानंद, पृथ्वीराज चौहान की किताबें— दक्षिण गुजरात में ऐसे अनोखे पाठक—

लाइये, नई किताबें
ग्रन्थों में, किश्तियों में
नई-नई हसरतें।
हम पुन: बसा लें
और एक छोटा से छोटा
नया पुस्तकालय
अपने गिरते लड़खड़ाते
टूटे, आलय में।
दादा-दादी, पापा-मम्मी
नाती-पोते, मन के सच्चे
सभी चाहते
किताबें किताबें किताबें।

—डॉ० रजनीकान्त जोशी

अमृता प्रकाशन, अहमदाबाद

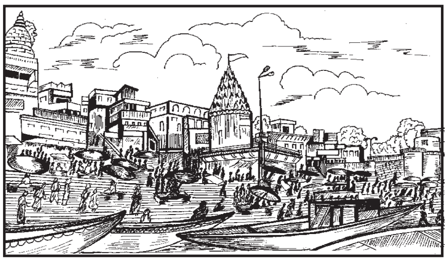

काशी, बनारस, वाराणसी एक शाश्वत नगर नहीं, एक देश है, एक इतिहास है। यह आनन्दवन है, महाश्मशान है, यहाँ मरण भी आनन्द है। सारा भारत यहाँ साक्षात है। शिव के जटाजूट से प्रवाहित गंगा काशी आकर पुन: उत्तरवाहिनी हो अपने जटाजूटधारी भोलेनाथ को देखने के लिए मुड़ी, आदि विश्वेश्वर शंकर उन्हें साक्षात दिखाई दिए। गंगा की यात्रा सफल हुई। पीछे-पीछे गंगातट पर सारा भारत आ बसा। काशी की गंगा में किसने अवगाहन नहीं किया। आदि शंकराचार्य, बुद्ध, श्रेयांसनाथ, रामानंद, कबीर, तुलसी, रविदास, कीनाराम, संत एकनाथ, तैलंग स्वामी, विशुद्धानंद सभी ने काशी को गरिमा प्रदान की। इस शाश्वत नगर और उसकी विभूति को जानिए काशी विषयक पुस्तकों में—

Studies in Indian Art *Dr. V.S. Agrawal* 400.00
Benaras : The Sacred City *E.B. Havell* 150.00
Prinsep's Benares Illustrated *James Prinsep* 800.00
शिव काशी (पौराणिक परिप्रेक्ष्य एवं वर्तमान संदर्भ) *डॉ० प्रतिभा सिंह* 400.00
काशी का इतिहास *डॉ० मोतीचन्द्र* 650.00
काशी की पाण्डित्य-परम्परा *पं० बलदेव उपाध्याय* 600.00
काशी के घाट : कलात्मक एवं सांस्कृतिक अध्ययन *डॉ० हरिशंकर* 300.00
धन धन मातु गङ्ग *डॉ० भानुशंकर मेहता* 250.00
वाराणसी के स्थाननामों का सांस्कृतिक अध्ययन *डॉ० सरितकिशोरी श्रीवास्तव* 250.00
काशी का रंग परिवेश *कुँवरजी अग्रवाल* 100.00
बना रहे बनारस *विश्वनाथ मुखर्जी* 30.00
स्वतन्त्रता-आन्दोलन और बनारस *ठाकुरप्रसाद सिंह* 120.00
कलागुरु केदार शर्मा के व्यंग्य-चित्रों में काशी *डॉ० धीरेन्द्रनाथ सिंह* 300.00
आज भी वही बनारस है *बड़े गुरू विश्वंभरनाथ* 150.00
काशी में मोक्षकामी प्रवासी विधवाएँ *सत्यप्रकाश मित्तल, रामलखन मौर्य* 200.00
तुंगभद्रा से गंगातट : हरिहर से विश्वनाथ *के० चन्द्रमौलि* 180.00

विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी

भाषा मनीषी पूर्वज को स्मरण करें

हिन्दी भाषा के उन्नायक **डॉ० धीरेन्द्र वर्मा** का जन्म 17 मई, 1897 को मोहल्ला भूड, बरेली शहर में हुआ था। इनके पिता खानचन्द्र कर्मठ और सक्रिय आर्य समाजी थे। धीरेन्द्रजी ने अपने पिता से ही भारतीय संस्कृति के विषय में चिन्तन तथा मनन की प्रेरणा ग्रहण की। भाषा और संस्कृति के प्रति उनकी विशेष अभिरुचि का मूल स्रोत भी वे थे। उनके पिता 5-6 वर्ष की अवस्था में उनको शिक्षा के लिए गुरुकुल कांगड़ी भेजना चाहते थे, लेकिन दादी और माँ के स्नेहाधिक्य के कारण उन्होंने डॉ० धीरेन्द्र को सन् 1908 में डीएवी कालेज, देहरादून में प्रवेश दिलाया। परन्तु एक वर्ष बाद वे अपने पिता के पास लखनऊ वापस आ गए और उन्होंने लखनऊ में ही क्वींस एंग्लो हाईस्कूल में लीविंग सर्टिफिकेट परीक्षा सन् 1914 में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की और हिन्दी में विशेष योग्यता प्राप्त की और उन्हें छात्रवृत्ति भी मिली। सन् 1921 में इसी कॉलेज से एम०ए० परीक्षा संस्कृत (वैदिक ग्रुप) में पास की। इसके उपरान्त इन्हें सरकारी डी०लिट्० स्कॉलरशिप मिला।

सन् 1924 में नवसंगठित इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हिन्दी के प्रथम प्रवक्ता नियुक्त हुए और सन् 1932 में रीडर, सन् 1946 में प्रोफेसर और इसी पद से 1959 में अवकाश ग्रहण किया। विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की प्रगति का श्रेय डॉ० धीरेन्द्र वर्मा को ही है। इनके निर्देशन में हिन्दी विभाग सदैव उन्नति के पथ पर अग्रसर होता रहा। डॉ० वर्मा ने सभी विश्वविद्यालय के हिन्दी भाषा, साहित्य तथा संस्कृति से सम्बन्धित शोध कार्य को दिशा दी। इनके शोध निबन्धों में मौलिक दृष्टि के संकेत मिलते हैं। इन्होंने सन् 1933 में हिन्दी भाषा का प्रथम वैज्ञानिक और महत्त्वपूर्ण इतिहास लिखा। सन् 1934 में वे भाषा विज्ञान के उच्च अध्ययन के लिए पेरिस गए। पेरिस विश्वविद्यालय से डी०लिट् की उपाधि प्राप्त कर 1935 में स्वदेश वापस आ गए। डॉ० धीरेन्द्र हिन्दुस्तानी एकेडमी की स्थापना के समय से ही उसके सदस्य रहे तथा लम्बी अवधि तक इसके मंत्री भी रहे। चूँकि भाषा विज्ञान, भाषा का इतिहास, साहित्य तथा संस्कृति का इतिहास इनके प्रिय विषय थे और इसी से सम्बन्धित उन्होंने अनेक कृतियाँ लिखीं, जैसे— हिन्दी भाषा का इतिहास, हिन्दी भाषा और लिपि, ब्रजभाषा का व्यारकण, मध्य देश आदि।

इसके अतिरिक्त मध्यप्रदेश का विकास, संसार की भाषाएँ और हिन्दी का स्थान, हिन्दी की नयी ध्वनियाँ तथा उनके नए चिह्न, हिन्दी वर्णों का प्रयोग, सूरदास और भागवत, वैज्ञानिक शब्दकोश अवध जिलों के नाम आदि विषयों पर निबन्ध लिखे। डॉ० धीरेन्द्र वर्मा वस्तुतः साहित्य निर्माताओं के भी निर्माता थे। उन्होंने अपने श्रम सीकरों से भाषागत साहित्यिक मानकों को स्थापित किया। भाषा और साहित्य को व्यापक दिशा देने वाले, उच्चकोटि के शोक निर्देशक आचार्य प्रवर डॉ० धीरेन्द्र वर्मा 23 अप्रैल, 1973 को सदैव के लिए चिर निद्रा में लीन हो गए।

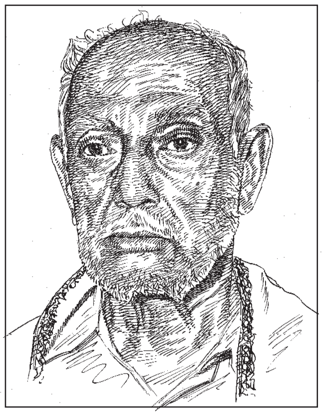

म०म० पं० गोपीनाथ कविराज के अध्यात्मपरक ग्रन्थ

भारतीय धर्म साधना	80.00
क्रम-साधना	60.00
अखण्ड महायोग	50.00
श्री साधना	50.00
श्रीकृष्ण प्रसंग	150.00
योगिराज विशुद्धानन्द प्रसंग तथा तत्त्व कथा	130.00
शक्ति का जागरण और कुण्डलिनी	100.00
दीक्षा	80.00
सनातन-साधना की गुप्तधारा	120.00
साधु दर्शन एवं सत्प्रसंग (भाग 1, 2)	70.00
साधु दर्शन एवं सत्प्रसंग (भाग 3)	50.00
मनीषी की लोकयात्रा (म०म०पं० गोपीनाथ कविराज का जीवन दर्शन)	200.00
ज्ञानगंज	60.00
प्रज्ञान तथा क्रमपथ	80.00
तन्त्राचार्य गोपीनाथ कविराज और योग-तन्त्र साधना	50.00
परातंत्र साधना पथ (गोपीनाथ कविराज)	40.00
भारतीय संस्कृति और साधना (भाग 1)	200.00
भारतीय संस्कृति और साधना (भाग 2)	120.00
अखण्ड महायोग का पथ और मृत्यु विज्ञान	60.00
काशी की सारस्वत साधना	35.00
भारतीय साधना की धारा	30.00
तांत्रिक वांङ्मय में शाक्त दृष्टि	100.00
तांत्रिक साधना और सिद्धान्त	120.00

विश्वविद्यालय प्रकाशन

चौक, वाराणसी

भोजपुरी मंगल-गीत

संकलन : **राजकुमारी मिश्र**

सम्पादक : **डॉ० जितेन्द्रनाथ मिश्र**

प्रकाशक : सेवक प्रकाशन, ईश्वरगंगी, वाराणसी

मूल्य : सजिल्द : 200.00, अजिल्द : 100.00

भोजपुरी एक बोली या भाषा मात्र नहीं। एक जीवन्त-संस्कृति है जो विभिन्न संस्कारों और अवसरों पर अभिव्यक्त होती है। यह लोकजीवन और परम्परा की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति है। भोजपुरी मंगल-गीत में विभिन्न संस्कारों के अवसर पर गाये जाने वाले गीतों का अनुपम संग्रह है। शिशु जन्म, मुण्डन, जनेऊ, विवाह संस्कार, तिलकोत्सव तथा विवाह से सम्बन्धित संगृहीत है। संग्रह के पूर्व उन संस्कारों की जानकारी भी कराई गई है जिससे उन संस्कारों की पारिवारिक और सामाजिक संवेदनशीलता की जानकारी होती है। यह संग्रह रामनरेश त्रिपाठी तथा कृष्णदेव उपाध्याय के भोजपुरी संग्रहों का स्मरण कराता है। आज टेलीविजन और फिल्म के वातावरण में लोक-जीवन को स्पर्श करते हुए ये गीत लुप्त होते जा रहे हैं जो परिवार को दूर तक एक-दूसरे से जोड़ते हैं। आत्मीयता पूर्ण स्मृति बिम्बों को प्रस्तुत कराते ये मंगल गीत भोजपुरी की अनुपम उपलब्धि है। जितेन्द्रनाथ मिश्र ने अपनी माता राजकुमारीजी से विरासत में प्राप्त कर सराहनीय कार्य किया है, एतदर्थ साधुवाद।

पुस्तकें

मैं,
ज्वालामुखी के लावे में कूदा
मुझे अपनी आगामी पुस्तक के
लिखने की थीम मिली।
पहाड़ की ढलान से लुढ़का
तो अनेक चरित्रों का
अहसास हुआ।
पतंग की तरह
हवा में गगन विहार किया,
तो चरमोत्कर्ष पाया।
लोक कथाओं की तरह
भाषा व घटनाओं का
गुम्फन किया
तब पाठकों का
लम्बा सिलसिला मिला।
सच,
पुस्तक
समुद्र-मंथन है
सम्पूर्ण पाठ पढ़ाती है—
जिन्दगी के,
आदमी को
संवेदनशील बनाती है
पुस्तकें
और पुस्तकें

—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र', बीकानेर

पुस्तक समीक्षा

सौन्दर्यलहरी
तन्त्र-दृष्टि और सौन्दर्य-सृष्टि

प्रभुदयाल मिश्र

प्रथम संस्करण : 2007
ISBN : 81-7124-537-4
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 120.00

सौन्दर्यलहरी (श्री शंकराचार्यकृत संस्कृत शिखरिणी काव्य) का प्रारम्भिक रोला हिन्दी अनुवाद वर्ष 1990 में प्रकाशित होने पर म०प्र० संस्कृत अकादमी द्वारा प्रादेशिक व्यास पुरस्कार (रु० 10,000 दस हजार) के साथ सम्मानित हुआ था। अंग्रेजी साहित्य में एम०ए० श्री प्रभुदयाल मिश्र ने विगत वर्षों में 'सबके लिये गीता' और 'सबके लिये वेद', 'मैत्रेयी' उपन्यास तथा 'योग के आध्यात्मिक नियम' आदि ग्रन्थ लिखे हैं। इसी क्रम में उनका मौलिक चिन्तन और शक्तिपात दीक्षा का वैभव उन्हें 'सौन्दर्यलहरी' के विस्तार के लिये प्रेरित करता रहा। इसका प्रथम अनुवाद ही बहुत सम / श्रेष्ठ था। अब इसमें उन्होंने 'आनन्दलहरी' और 'सौन्दर्यलहरी' के साथ 'आनंदलहरी स्तोत्रम्' के 20 छंद तथा योग और तंत्र में प्रयोज्य 103 यंत्र और उनके तांत्रिक प्रयोग भी, सचित्र व्याख्या सहित जोड़े हैं। ईसा की 6वीं-7वीं की शताब्दियों में भारत ऐसे शतष: तन्त्रों / यन्त्रों से व्याप्त था, जिसने देवनागरी लिपि के गठन, संवर्धन में भी सहायता की थी। मिश्रजी ने इस सबको समझा है। वस्तुत: सौन्दर्यलहरी, समयाचार तंत्र साधना का ग्रन्थ है, जिसका केन्द्रीय विषय श्रीविद्या है।

श्रीविद्या को प्रकाशित करने वाला श्री शंकर का यह सौन्दर्योपक्रम, एक महान तपस्वी का सृष्टिकर्म है—इसमें जड़, चेतन, स्थूल सूक्ष्म तथा बाह्य और आन्तर समानान्तर चलते हुए लोक का अतिक्रमण कर, देहातीत, भावातीत, गुणातीत और द्वन्द्वातीत हो जाते हैं।

आचार्य श्री राधावल्लभ त्रिपाठी ने सही कहा है—''सौन्दर्यलहरी सभी कुछ है। यह ग्रन्थ एक पहेली है—तंत्र आगम, उत्तमकाव्य, दर्शनशास्त्र, ज्ञान का सागर और साधना पद्धति, सभी एक साथ है। महाकवि कालिदास के मेघदूत जैसे एक दो अपवादों को छोड़ दें तो विश्व साहित्य में कदाचित एक यही ऐसा काव्य है जो मुक्तक और प्रगीत के अनुपम भाव सौन्दर्य व लालित्य के साथ महाकाव्य और महावाक्य भी बनता है। वास्तव में पूरे विश्व को नवीन रूपान्तरण के लिये जो महाशक्तियाँ सक्रिय हैं—उसकी अभिव्यक्ति के एक सहज सुन्दर माध्यम श्री मिश्रजी भी बन गये हैं।''

अंत में तंत्रागम में प्रयुक्त यंत्रों के 103 चित्र उनकी व्याहतियों के साथ दिये गये हैं।

—प्रो० मूँगाराम त्रिपाठी
एम०ए०, एम०एड०, सिद्धान्त वाचस्पति

हिन्दी निबंध और निबंधकार

डॉ० रामचन्द्र तिवारी

प्रथम संस्करण : 2007
ISBN : 81-7124-565-X
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : सजिल्द : 250.00, अजिल्द : 150.00

हिन्दी निबंध और निबंधकार हिन्दी में अपने तरह की अकेली पुस्तक है। प्रारम्भ में दो भूमिकाओं के रूप में हिन्दी निबंध के स्वरूप और बीसवीं सदी में उसकी उपलब्धियों पर विचार किया गया है। इसके बाद भारतेन्दु-युग से लेकर आज तक के सभी निबंधकारों की कृतियों का परिचय और निबंधकार व्यक्तित्व का आकलन किया गया है।

प्रमुख निबंधकार

1. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, 2. बालकृष्ण भट्ट, 3. प्रतापनारायण मिश्र, 4. महावीरप्रसाद द्विवेदी, 5. बालमुकुन्द गुप्त, 6. सरदार पूर्ण सिंह, 7. चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, 8. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 9. महादेवी वर्मा, 10. आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, 11. रामधारी सिंह 'दिनकर', 12. अज्ञेय, 13. डॉ० नगेन्द्र, 14. डॉ० रामदरश मिश्र, 15. डॉ० विद्यानिवास मिश्र, 16. डॉ० शिवप्रसाद सिंह, 17. विवेकी राय 18. निर्मल वर्मा, 19. कुबेरनाथ राय, 20. डॉ० कृष्णबिहारी मिश्र, 21. रमेशचन्द्र शाह, 22. श्री नर्मदाप्रसाद उपाध्याय।

मुट्ठी भर भूख

डॉ० एम०डी० सिंह

प्रथम संस्करण : 2007
ISBN : 81-7124-558-7
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 120.00

'मुट्ठी भर भूख' अस्तित्ववाद और उपभोक्तावादी प्रभाव को पछाड़ती जीवन की उद्दामता और उसे देखने की एक खास तरह की मंगलमयी दृष्टि है; बढ़ती हुई सामाजिक एवं आर्थिक विषमताओं के बीच परिवर्तन का भी दहकता बिम्बविधान है; राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय घटनाओं के प्रति एक सजग हस्तक्षेप है; अंतर्वैयक्तिक सम्बन्धों के कोरी स्वार्थांधता से आच्छादित होने के विरुद्ध तीखी प्रतिक्रिया है; जिस इतिहास के छोर पर कवि खड़ा है और जिस समय को कवि जी रहा है उसके प्रति भी अपनी चिन्ताएँ हैं; जिस देश में कवि रह रहा है उसकी सम्प्रभुता और उसके विधायक तत्त्वों के प्रति उसका आक्रोश और उसकी पीड़ा भी है और अन्त में इस धर्मप्राण देश की अन्धी धार्मिकता और धर्मोन्माद के प्रति उसके कुछ प्रश्न और कुछ शंकाएँ भी हैं। जीवन के बहुविध आयामों से जुड़ी कवि मुनि देवेन्द्र सिंह की कविता हमसे सिर्फ सहृदयता की ही माँग नहीं करती वरन् वह सजग बौद्धिकता की भी माँग करती है।

इन कविताओं का अनुभव-संसार, घर और गाँव से शुरू होकर वृहत्तर समाज से होते हुए राष्ट्र और विश्व तक और काल की दृष्टि से कवि के समय से लेकर प्रागैतिहासिक काल तक फैला हुआ है। यथार्थ की ओर रुख करती कविता मुट्ठी भर भूख से लेकर मनुष्य की आध्यात्मिक भूख तक की तार्किक पड़ताल करती है। ऐसी कविताओं से गुजरना एक सुखद एहसास से गुजरना है।

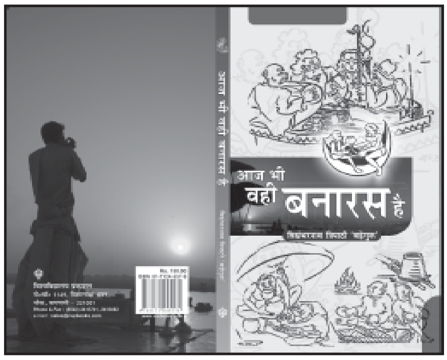

आज भी वही बनारस है

विश्वंभरनाथ त्रिपाठी 'बड़े गुरू'

प्रथम संस्करण : 2007
ISBN : 81-7124-557-9
विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी
मूल्य : 150.00

बनारस हास-परिहास का गढ़ रहा है। यहाँ भारतेन्दु से आरम्भ करके अन्नपूर्णानन्द, बेढब, बेधड़क, भैयाजी, चोंच, कौतुक प्रभृत अनेक दिग्गज मैदान में बनारसीपन की छटा बिखेरते रहे हैं और इस दौर में बड़ेगुरू मौन, स्वान्त:सुखाय साधना करते रहे। अखबारों में उनकी रचनाएँ एक आभूषण की तरह चिपकी रही हैं पर उनका मूल्यांकन हुआ ही नहीं। आज उनकी रचनाओं पर दृष्टिपात करें तो समझ में आएगा कि बड़ेगुरू वास्तव में बनारसीपन के सर्वश्रेष्ठ प्रथम श्रेणी के रचनाकार हैं। यही नहीं विरल संयोग है कि वे कवि होने के साथ-साथ चित्रकार भी हैं।

इस वर्तमान काव्य-संग्रह 'आज भी वही

बनारस है' की 40 रचनाएँ बड़ेगुरू के बनाए कार्टूनों से सुसज्जित हैं अर्थात् सोने में सुहागा भी मिला है। इनमें व्यंग्यकार की दृष्टि से राजनीतिक परिप्रेक्ष्य पर दृष्टि डाली गई है, समाज और सामाजिक रीति-रिवाजों और कुरीतियों की भी खबर ली गई है। इसमें नेता हैं, लक्ष्मीवाहन है, तटस्थ हैं, अमेरिकी गेहूँ है, राजलीला है, लाढ़ेराम हैं, उग्रवाद, आतंकवाद और अणुबम है, खतरे का भोंपा है, पूर्ण शान्ति है, और है नाक में दम कि मृत्यु का कौन ठिकाना। समझदार की मौत है और आशा है कल का दिन होगा सुनहला। समाज की दु:खती रग पर हास्य-व्यंग्य की नश्तर लगाती ये रचनाएँ बेजोड़ हैं।

इनके साथ इस संग्रह में एक कला खण्ड भी है जो अक्षर तो नहीं पर बोलता है, बनारस का दर्शन कराता है। जो बनारस के हैं, बनारसी हैं वे इन चित्रों को देखकर लोट-पोट हो जायेंगे। ढूँढियेगा इसमें आपकी, आपके नेता की, आपके शहर की कितनी छबियाँ हैं और जब ये चित्र खोपड़ी में तागड़ धिन्ना करेंगे तो बरबस आप कह उठेंगे—'बाह गुरू बाह'।

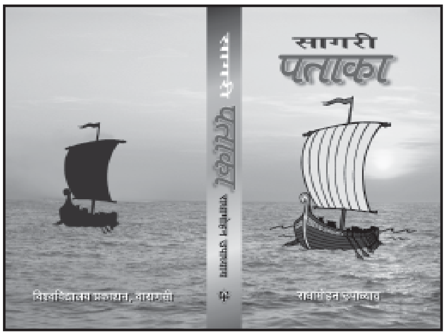

सागरी पताका

राधामोहन उपाध्याय

ISBN : 81-7124-213-8

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : 250.00

यह विश्व का प्रथम ग्लोबल उपन्यास है जो हिन्दी में लिखा गया है। यह भारतीय ज्ञान का वृहद् कोश है क्योंकि इसमें यज्ञ, गीता दर्शन, सांख्य दर्शन, श्राद्ध, आत्मवाद, मूर्तिपूजा आदि अनेक महत्त्वपूर्ण विषयों पर गम्भीर चिन्तन है। लेखक ने विभिन्न धर्म सभाओं में चार-चार मंत्रों से एक ही विषय पर खुल कर चर्चा कराई है। ये चार मंच हैं—कर्मकाण्डी, दार्शनिक, चारवाकी या आज का साम्यवादी एवं समाजशास्त्री। अतीत में भारतीय संस्कृति का क्या विस्तार था यह लेखक ने संस्कृत के ग्रन्थों, अद्यतन प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर दिखाया है। लेखक की कल्पना साक्ष्य आधारित है। राजा सगर के साठ हजार सैनिक (बेटे नहीं) सात बेड़ों से चलते हैं विश्व विजय को या विश्व में आर्य धर्म स्थापन को। इनमें से कुछ बसे अफ्रीका में, कुछ मिस्र में, कुछ जर्मनी में, कुछ दक्षिणी अमेरिका में, कुछ डूब गये और अधिकांश बसे अमेरिका में। भारतीयों ने नया रूप दिया अमेरिका को। कपिल मुनि का सांख्य दर्शन, युद्ध विरोधी विचार एवं राष्ट्रभक्ति का आह्वान। कांगो नदी के किनारे दिल दहला देने वाले प्रसंग हैं। मिस्र के राजमहलों में, गायना के निकुंजों में एवं अमेरिका की उपत्यकाओं में पाठकों को बाँध लेने वाले रसिक प्रसंग हैं। वेदों में श्रृंगार आपको यहीं देखने को मिलेगा। अतलांतिक अतल लोक के अन्तिमक (पास) होने से बना है। शर्मन देश था जर्मनी, स्री नदी थी श्री, ऋत्वायन से मिलता नाम लिथ्वायन या लिथुएनिया, वार्तिक सागर ही बाल्टिक सागर है, सुकेश पुत्र सोमाली से सोमालिया, रिपुसूदन का था सूडान, त्रिपुर था अमेरिका में। मिश्रवारि थी मिस्सौरी और आमाजन वैदिक नाम से बना आमेजन। राइन थी रोहिणी। मुरक पण्डित से बना मोरक्को। इसमें है हिमालय की अजीबोगरीब चीजों का वर्णन जहाँ की घटनाओं को पढ़ने मात्र से दिल की धड़कन तेज हो जाती है। लेखक ने अतीत के झुरमुट में स्थान-स्थान पर वर्तमान की छटा एवं समस्याओं को दिखाया है। पर्यावरण प्रदूषण, छुआछूत एवं राष्ट्रीयता पर विशद चर्चा है। जह्नु ने गंगा प्रदूषण रोकने के लिए ही अड़ा दी थी टाँग गंगावतरण में। आग्नेयास्त्र बनाने और चलाने की विद्या राजा सगर को कैसे मिली और इससे उन्हें क्या लाभ मिला? परखनली से कैसे कृत्रिम प्रजनन होता था भारत में आज से बीस हजार वर्ष पहले। भगीरथ की भूगर्भ विद्या कैसे सहायक बनी गंगा को धरती पर लाने में। अगस्त्य ने ही पूर्वी द्वीप समूहों का पता लगाया। इसी से लोगों ने कहा अगस्त्य ने समुद्र पी लिया। अत्रि पश्चिमी सागर में घूमते रहे केवल अफ्रीका तक पहुँच सके थे। भारतीय संस्कृति को अभिनव एवं वैज्ञानिक दृष्टि से देखने का प्रयास किया है लेखक ने।

नामालूम रिश्तों का दंश

(कविता संग्रह)

डॉ० नीहारिका

प्रथम संस्करण : 2007

ISBN : 81-89498-08-8

अनुराग प्रकाशन, वाराणसी

मूल्य : 120.00

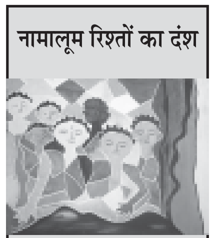

यह देखकर सुखद आश्चर्य होता है एक नई लेखिका के पहले कथा संग्रह 'नामालूम रिश्तों का दंश' की कहानियाँ, जल्दबाजी में लिखी गई कहानियों की कोटि में बिलकुल नहीं आती। नई गढ़ी शब्दावली या चमत्कारिक करिश्मों का मोह भी नहीं दिखता इनमें। बड़े यत्न से चुपचाप व्यक्ति मन की गहराइयों में उतरने का चाव है इन कहानियों में। राहत इस बात की भी है कि नई होने के बावजूद 'विमर्शी' मायाजाल के चालू फार्मूलों से भी पूरी तरह मुक्त हैं ये।

यद्यपि अधिकांश कहानियाँ परिवार और स्त्री-पुरुष सम्बन्धों के प्रचलित कथ्यों को लेकर चली हैं, लेकिन लेखिका की खूबी प्रचलित और रूढ़ के बीच से संवेदना और सम्बन्धों के नये मुहावरे गढ़ने में है। पति-पत्नी सम्बन्धों के बेहद बारीक उलझनों को बड़ी सहजता से उजागर कर ले गई हैं ये कहानियाँ, वह भी रोजमर्रा के बेहद आसान शब्दों में। इस समूची प्रक्रिया में न कहीं इनका कहानीपन बाधित होता है, न वे विचारों के दबाव से आक्रांत दिखती हैं।

बाहरी संसार के समानान्तर मनुष्य के अन्दर भी एक बहुत गहरा, बहुत विस्तृत और तिलस्मी 'मनस्-लोक' बसता है, हिन्दी कहानी में, बाह्य स्थितियों के साथ-साथ इस मायावी मनोलोक के छुपे प्रकोष्ठों, पर्त्तों की शोध के लिए अभी बहुत स्कोप/गुंजाइश है लेकिन बाज़ार और विमर्शों का दबाव हमें सिर्फ शरीर के स्तर पर भटकने के लिये बाध्य कर रहा है। खुशी है कि लेखिका ने यह खतरा उठाया है। 'नामालूम रिश्तों का दंश' तथा 'अर्द्धांगिनी' जैसी अनेक कहानियों में स्थितियों, मन:स्थितियों और अन्तर्द्वन्द्वों का एक अवसादी किन्तु सम्मोहक इन्द्रजाल फैला है जो विचार और भावना दोनों स्तरों पर पढ़ने वालों को उद्वेलित भी करता है, सोचने पर विवश भी। वर्णन-विस्तार का मोह और भावुकता के अतिरेक को बचा पातीं तो सर्वथा नई संवेदना की कहानियों में ये श्रेष्ठतर होतीं। क्योंकि इनमें मुश्किल और अमूर्त को आसानी से कह ले जाने की सामर्थ्य है।

स्त्री की गरिमा को बड़े यत्न से सहेजा गया है इन कहानियों में। कई प्रसंगों पर पढ़ने वाले का औत्सुक्य अपने चरम पर पहुँचता और स्त्री-पात्रों द्वारा लिया जाने वाला निर्णय, अप्रत्याशित होने के बावजूद उसे चकित और अभिभूत करता है। इसलिए भी क्योंकि जीवन और सम्बन्धों को बेहद निष्कलुषता से जी लेने की एक पवित्र जिद सी ठान बैठते हैं ये स्त्री-पात्र। यूँ भी पुरुष हो या स्त्री इन कहानियों के पात्र थोड़े ज्यादा भावुक होने के बावजूद विचारशील और अतिशय दृष्टि-सम्पन्न हैं। साथ ही भावुकता का अतिरेक जीवन मूल्यों को सहेजने की दिशा में ही सचेष्ट है, जीवन को खण्डित, विरूप करके बीच रास्ते छोड़, आगे बढ़ जाने वाला नहीं।

विश्वास है कि 'नामालूम रिश्तों का दंश' मर्मज्ञ पाठकों के बीच समादृत होगा।